કહાન મહિમા પ્રકાશન પુષ્પ નં. ૧૯ (પુસ્તિકા–૯)

ૐ

શ્રી વીતરાગાય નમઃ

# ચંપામૃત

પૂજ્ય બહેનશ્રી ચંપાબહેનનાં વચનામૃતોનું ક્રમિક,
સંપૂર્ણ શાસ્ત્રીય, હરિગીતિકા છંદમાં પદ્યરૂપાંતર

પદ્યરૂપાંતરકર્તા :
ધીરજલાલ પ. દેસાઈ (ચૈતન્યપ્રિય) (B.Sc. M.Ed.)

પ્રકાશક
શ્રી સવિતાબહેન ધીરજલાલ ડેલીવાળા
C/o શ્રી કિરણભાઈ ધીરજલાલ ડેલીવાળા
સેક્ટર–૨૪, સહયોગ એપાર્ટમેન્ટ, બ્લોક નં. M/20/236
ગાંધીનગર–૩૮૨૦૨૩, ફોન નં. (૦૭૯) ૨૩૨૩૯૧૫૭

આવૃત્તિ-પ્રથમ પ્રત-૫૦૦
વીર સંવત-૨૫૨૯ સંવત-૨૦૬૦ ઈ.સ. ૨૦૦૪

## ક્હાન મહિમા ગ્રંથમાલા

આ ગ્રંથમાલામાં પૂ. સદ્‌ગુરુદેવશ્રી કાનજીસ્વામી અને પૂ. બહેનશ્રી ચંપાબહેનનાં પ્રવચનોના પદ્યરૂપાંતરો અને પદ્યાનુવાદો આધારિત પુસ્તિકાઓ ગુજરાતી અને હિન્દી ભાષામાં પ્રકાશિત થતી રહેશે. આ ઉપરાંત તેમનો મહિમા વ્યક્ત કરતાં કાવ્યો, નાટકો, નૃત્યનાટિકાઓ અને અન્ય પ્રકારનાં સાહિત્યને લગતી પુસ્તિકાઓ પ્રકાશિત થતી રહેશે. આ પુસ્તિકાનો ક્રમાંક ૯ છે.

આ પુસ્તિકાની આવૃત્તિ સ્વ. ધીરજલાલ ગંભીરદાસ ડેલીવાળાની સ્મૃતિમાં શ્રી કિરણભાઈ ધીરજલાલ ડેલીવાળા તરફથી ભેટ આપવા માટે પ્રકાશિત કરવામાં આવી છે.

પ્રકાશન તા. ૨૧-૪-૦૪ વૈશાખ સુદ ૨
(પૂજ્ય ગુરુદેવશ્રી કાનજીસ્વામીનો ૧૧૫મો જન્મજયંતી દિન)

ચંપામૃત

મૂલ્ય : સ્વાધ્યાય

ટાઈપ સેટિંગ :
**પ્રજ્ઞા ગ્રાફિક્સ**
ગાંધીનગર
✆ : (079) 23239157

મુદ્રક :
**સ્મૃતિ ઑફસેટ**
સોનગઢ-૩૬૪૨૫૦
✆ : (02846) 244081

## 卐 ॐ नमः सिद्धेभ्यः 卐

ॐ सिद्ध शुद्धात्मने नमः । नमः श्री सीमंधराय ।

श्री सर्वज्ञाय नमः । श्री वीतरागाय नमः ।

ॐ स्व शुद्धात्मने नमः । नमः श्री सद्गुरुदेवाय ।

जैनं जयतु शासनम् ।

# णमोकार महामंत्र

णमो अरहंताणं ।

णमो सिद्धाणं ।

णमो आयरियाणं ।

णमो उवज्झायाणं ।

णमो लोए सव्वसाहूणं ।

एसो पंच णमोयारो, सव्वपावप्पणासणो ।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं ।।

*चत्तारि मंगलं*—अरहंत मंगलं, सिद्ध मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं ।

*चत्तारि लोगुत्तमा*—अरहंत लोगुत्तमा, सिद्ध लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा ।

*चत्तारि सरणं पव्वज्जामि*—अरहंत सरणं पव्वज्जामि, सिद्ध सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तो धम्मो सरणं पव्वज्जामि ।

# आद्य वक्तव्य

## ❑ प्रकाशन की शुरूआत कब से हुई ?

महावीर निर्वाण कल्याणक दिन विक्रम संवत २०२२ दिनांक १२-११-६६ को ''कहान महिमा'' काव्य संग्रह दीपावली के दिन प्रवचन के बाद पूज्य सद्गुरु देवश्री कानजी स्वामी की उपस्थिति में प्रकाशित हुआ। इसका स्वाध्याय मंदिर सोनगढ़ में विमोचन हुआ। उसमें विविध मात्रामेल, अक्षरमेल तथा अपद्यागद्य छंदो को काव्य, गीत और सॉनेट में प्रयोजित करने में आया। अंतिम काव्य में १३२ हरिगीत श्लोक 'प्रवचन प्रकाश' नाम से प्रकाशित हुए। यह श्लोक पू. गुरुदेवजी के प्रवचन में से प्रवचन दरम्यान चुने हुए अगत्य के सूत्रों के पद्यरूपांतर थे। पू. गुरुदेवजी के प्रवचनों में हजारों की संख्या में सनातन सत्य, सूत्र, सिद्धांत, नियम, व्याख्या, उदाहरण, प्रमेय प्रस्फुरित होते रहते हैं। उसको पद्यरूपांतर में परिवर्तन करने की महेच्छा रहा करती थी। अंतिम ३५ वर्ष दरम्यान विविध पद्यरूपांतर और पद्यानुवाद होते रहे। थोड़े नाटक, नृत्य नाटिका, संवाद, एक पात्री अभिनय, रास-गरबा जैसी सांस्कृतिक कार्यक्रम में उपयोगी रचनाएँ भी हुईं। इन काव्यों में से कोई कोई रचना को पू. गुरुदेवश्री के समक्ष गाने का लाभ भी मिला। पू. गुरुदेवश्री के पवित्र कर करमल से ही सभी पुस्तिकाएँ वितरीत भी हुईं।

## ❑ कौन कौन से पद्यरूपांतर तैयार हुए हैं ?

(१) पू. बहिनश्रीके वचनामृतों का पद्यरूपांतर एवं पद्यानुवाद (हिन्दी और गुजराती में) (अंदाजित १२०० श्लोक) चंपामृत

(२) पू. गुरुदेवश्री के वचनामृतों का पद्यरूपांतर एवं पद्यानुवाद (हिन्दी और गुजराती में) (अंदाजित १०७० श्लोक) कहानामृत

(३) समयसार कर्ताकर्म अधिकार पर पू. गुरुदेवश्री के प्रवचन (पू. बहेनश्री लिखीत भाग–४) (अंदाजित १४५० श्लोक)

(४) अन्य प्रवचनों का पद्यरूपांतर-प्रवचनप्रकाश (अंदाजित ४०० श्लोक)

(कुल 'हरिगीतिका' मात्रामेल छंद में लिखे हुऐ अंदाजित ४००० श्लोक-कहान तत्त्वसार)

## ❑ पद्यरूपांतर श्लोको का बंधारण कैसा है ?

यहाँ पर 'हरिगीतिका' २८ मात्रामेल छंद प्रयोजने में आया है। 'हरिगीतिका' की सात मात्राओं का चार बार पुनरावर्तन होने से यह छंद की २८ मात्रा की एक पंक्ति बनती है। 'दादालदा' का चार आवर्तन होता है। पाँचवीं मात्रा लघु होती है। ७, १४, २१, २८ मात्रा पर 'यति' होता है और अंतमें 'र' गण होता है। अत्यांनुप्रास भी होता है। सुंदर राग से गा सकते है। पंडितरत्न श्री हिंमतभाई (मेरे काकाजी श्वसुर) ने पंच परमागम के श्लोको के पद्यानुवाद में 'हरिगीत' का उपयोग किया है। यह छंद मुमुक्षु समाझ में अति प्रचलित हुआ है। इससे मिलता-झुलता यह छंद है।

## ❑ यह पद्यरूपांतरो की विशेषताएँ क्या क्या है ?

(१) इ. स. १९६६ में पू. गुरुदेवश्री की उपस्थिति में इस प्रकार के १३२ श्लोक 'कहान महिमा' में प्रकाशित हो चूके हैं। इस प्रकार के प्रयास का यह विस्तृत कार्य है। इसलिये यह प्रमाणभूत है।

(२) ये रचनाएं वर्गीकृतरूप से ६ पुस्तिकाओं में प्रकाशित हो चूकी है। यह इसका संपूर्ण, क्रमिक, शब्दशः स्वरूप है।

(३) पू. गुरुदेवश्री कानजी स्वामी और पू. बहिनश्री चंपाबहिन के शब्दों और भावों का ही इसमें बरोबर अनुसरण हुआ है। इस में कुछ भी मौलिक नहीं है।

(४) भाषा, शैली, छंद बंधारण, शब्द, भाव, स्पष्टता, चरणों का क्रम, वर्गीकरण, पुनरावर्तन, कठीनता, विश्वसनियता, प्रमाणभूतता, सापेक्षता, समीक्षा, विवेचन, समालोचना, डिस्क्रीमीनेशन जैसी अत्याधुनिक साहित्य निर्माण की प्रक्रिया में यह पद्यरूपांतर पसार हो चूका है। इसलिए यह संशोधन संकल्पना का आधार सहित है।

(५) यह पद्यरूपांतर एवं पद्यानुवाद दूसरे अनेक दृश्य-श्राव्य माध्यम में भावी में परिवर्तन होने की शक्यता धराता है।

(६) ८००० जितने पू. गुरुदेवश्री कानजी स्वामी एवं पू. बहिनश्री चंपाबहिन के

प्रवचनों में से लाखों श्लोक प्रमाण पद्यरूपांतर रचनाओं की शक्यता-क्षमता इस में रही है।

(७) भारत के महत्व के तीर्थस्थानों की इस मूल प्रतों के साथ यात्रा की गई है।

(८) अभी तक प्रकाशित रचनाओं की मुमुक्षु तथा अन्य समाज के द्वारा लिखित एवं मौखिक स्वरूप में बहुत प्रशंसा हूई है।

(९) 'आत्मप्रतीति' राजकोट सामयिक में भणका १ से १८ तक में 'चंपामृत' स्वरूपमें ९७ वचनामृतों का पद्यस्वरूप प्रकाशित हो चूका है। और बहुत सी चनाएं भी 'आत्मप्रतीति' तथा अन्य सामयिको में प्रकाशित हो चूकी है।

(१०) 'कहान महिमा' भाग १ से ५ और 'मातमहिमा' भाग १ से ३ स्वरूप में ओडियो केसेट्स, आल्बम और उनकी हजारो नकलें मुमुक्षु समाझ में भेट स्वरूपमें दी गई है। जिस का संतवाणी कलाकार के स्वरमें साउन्ड स्टुडियों में ध्वनि मुद्रण हुआ है। रमणीकभाई अजमेरा (भावनगर) और कांतिभाई कामदार (मद्रास) ने दो केसेट्स स्पोंन्सर की है।

(११) ऑडियो केसेट्स आल्बम का **MP3 CD** स्वरूपमें छह घंटो का ऑडियो रेकोर्डिंग हो चूका है। जिस की ७०० नकल मुमुक्षु समाझ को भेंट दि गई है। जिस को जिनबाल (लंडन) में स्पोन्सर किया है।

'कहान तत्त्वसार' **VCD** ७०० पेईझ और ५० फोटोग्राफ्स स्वरूप में तैयार की गई है। और 'कहान तत्त्वसार' भाग १ से ३ ऑडियो विडियो स्वरूप में भी तैयार कि गई है। जिसमें ७०० पेईझ के बेक ग्राउन्ड में 'कहानमहिमा' और 'मातमिहमा' के भजन दिये गये है। जिसकी नकलें भी भेट दी जा रही है।

''धन्य बन्यो रे पेलो गढ गीरनार'' नाटक जो सोनगढ में हमारे कुटुंब की बहिनों के द्वारा अभिनित किया गया था उसकी **VCD** स्वरूप में अनेक नकलें भेंट दी जा रही है।

(१२) यह रचनाए और ऑडियो केसेट्स तथा **VCD** आल्बम सोनगढ, अहमदाबाद, शिवपुरी आदि स्थोलों से विमोचित हुई है। जिसका न्युझ पेपर्स में विस्तृत अहेवाल भी छपा है।

## ❑ अन्य कौन कौन से पद्य स्वरूप तैयार हुए है ?

‘कहानमहिमा’ (पू. सद्गुरुदेवश्री कानजी स्वामी की महिमा) ‘मातमहिमा’ (पू. बहिनश्री चंपाबहिन की महिमा), धन्यावतार (नृत्यनाटिका), जन्मवधाई (संवाद), कहान आव्या ! (नृत्य नाटिका), जैन भजन, स्तवन, काव्य, गीत, सॉनेट आदि अनेकविध रचनांए प्रकाशित हो चूकी है। अभी तक में ४००० श्लोक और १०० जैन भजनें प्रकाशित हो चूके हैं। जिस की यादी अंतीम टाईटल पेईझ ३, ४ पर दी गई है।

## ❑ पद्यरूपांतर को कौन कौन से सूत्रों में वर्गीकृत किये गये है ?

जीवसूत्र, समकितसूत्र, पुण्य-पापसूत्र, दृष्टिसूत्र, कारकसूत्र, मार्गसूत्र, उपादानसूत्र, भावनासूत्र, नयसूत्र, ज्ञानसूत्र, देवसूत्र, द्रव्यसूत्र, पुरुषार्थसूत्र, पंचतत्त्वसूत्र आदि सूत्रों के स्वरूप में ६ पुस्तिकाओं में ४००० श्लोक प्रमाण रचनांए प्रकाशित हो चूकि है। ये सब वर्गीकृत स्वरूप में है जिस से एक ही प्रकार की संकल्पना, विभावना का एक साथ अभ्यास हो सके और एकसूत्रता रह सके।

## ❑ सूत्र शब्दका उपयोग क्यों किया गया है ?

पूज्य गुरुदेवश्री कानजी स्वामी और पूज्य बहिनश्री चंपाबहिन के प्रवचनों में हरहमेश सनातन सत्य, नियम, सिद्धांत, व्यारव्या, सूत्रों का प्रतिपादन होता रहा। पूज्य गुरुदेव श्री हमेशा उसका पारायण करते थे। पूज्य गुरुदेव श्री और बहिनश्री विदेहक्षेत्र में बिराजमान श्री सीमंधर स्वामी की दिव्य ध्वनि सूनकर भारत में आये है। पूज्य श्री कुंदकुंदाचार्य मुनि आचार्य भगवंत जब विदेहक्षेत्र में पधारे तब उन दोनों की वहाँ उपस्थिति थी। इस से उनके प्रवचनों में जिनसूत्र ही प्रस्फुरित हो रहे थे। उनके सभी वाक्य भागवत वाक्य थे। प्राकृत गाथाएँ और प्राचीन शास्त्रकारों ने रचे हुऐ ग्रंथ भी सूत्र कहलाते है। पूज्य गुरुदेवश्री और पूज्य बहिनश्री के सभी प्रवचनें भी सूत्र ही है। इसलिये यहाँ पर सूत्र शब्द को प्रयोजने में आया है।

## ❑ यह प्रस्तुत रचना में कौन सी भिन्नता है ?

आगे वाली सभी रचनाएं वर्गीकृत स्वरूप में थी। यह रचना क्रमिक स्वरूप में है। ये रचनाएं वचनामृतों का संपूर्ण, क्रमिकः, शब्दशः, शास्त्रीय छंदोबद्ध

पद्यस्वरूप है। दोनों वचनामृतों में सभी शास्त्रों का संक्षिप्त सार आ जाता है। इसलिये इसका पद्यस्वरूप किया गया है। यह सुंदर राग से गाया जा सकता है। स्वाध्याय कर सकते है। ऑडियो रूपांतर हो सकता है। गद्य स्वरूप की अपेक्षा पद्य स्वरूप अधीक कर्णमधुर होता है। प्राचिन सभी रचनाएं पद्यस्वरूप में ही लिखी गई है। इसीलिये यह पद्यस्वरूप का नम्र प्रयास है।

### ❑ यह कृत्य किस का है ?

इस में मेरा कुछ भी कर्तृत्व नहीं है। कुछ भी मौलिक नहीं है। पूज्य गुरुदेवश्री कानजी स्वामी और पूज्य बहिनश्री चंपाबहिन का ही सबकुछ है। उसके शब्द और भावों को यथातथ्य रखकर जैन तत्त्वज्ञान (कहान तत्त्वज्ञान) को वर्गीकृत और क्रमिक स्वरूप में देने का यह नम्र प्रयास है। वैसे भी यह सब पुद्गल का ही खेल है। इस में आत्मा का कुछ भी कर्तृत्व है ही नहीं।

### ❑ तो फिर यह सब क्यों है ?

पूज्य गुरुदेव श्री का तत्त्वज्ञान अलौकिक, संपूर्ण, अवर्णनीय, सुस्पष्ट, सरल, स्यादवाद स्वरूप, सूत्रात्मक, सर्वांग शुद्ध, सैद्धांतिक, नियमबद्ध, व्याख्यायित, क्रमिक, आगमन-निगमन युक्त, अनुबंधित, उदाहरण युक्त, नाविन्य से भरपूर (Innovative), रसदायक तत्त्वज्ञान है। उसका लयबद्ध पद्यस्वरूप और संगीतमय रजूआत याद रखने के लिये, सुनने के लिये पद्य स्वरूप में अधिक उपयोगी हो सकता है। प्राचीन सभी साहित्य लाखों, करोंडो श्लोकों के स्वरूप में पद्य में ही लिखा गया है। इसलिये पद्यस्वरूप इच्छने योग्य है।

### ❑ इस कार्य में किसका सहकार संप्राप्य है ?

इस प्रकाशनों का गुजराती कम्प्युटर सेटींग मेरे भानजें किरन डेलिवाला, प्रज्ञा डेलिवाला, एकता डेलिवाला और हिन्दी निलय जैन ने किया है। मुद्रण कार्य ज्ञानचंद जैन स्मृति ओफसेट सोनगढ़ ने किया है। समीक्षा, विवेचन, भाषा शुद्धि बगैरह में लोकभारती के अध्यापकों की मदद मिली है। आत्म प्रतीति सामयिक में 'चंपामृत' का शिर्षक से १८ मनका प्रकाशित हुए है। और अन्य भी बहुत से काव्य प्रकाशित हुए है। इसलिये मुमुक्षु समाझ में इस प्रकार का प्रयास सुप्रसिद्ध है। इस प्रकार के प्रयास को प्रोत्साहित करते, प्रशंसा युक्त अनेक अहेवाल, अभिप्राय, मौखिक और

लिखित स्वरूप में प्राप्य हुए है। उन सब का मैं आभारी हूँ। और भविष्य में भी सहकार प्राप्त होता रहेगा ऐसी अभिलाषा रखता हुं हमारे कुटुंब के अनेक सभ्यो ने मुझे हंमेशा प्रोत्साहित किया है। मेरे मातुश्री समान श्री ललिताबहिन अजमेरा, बहिनें प्रभाबहिन, लाभुबहिन, मंजुबहिन, गुणवंती बहिन, सविता बहिन और उनके कुटुंबी तथा मेरी धर्मपत्नी सुधा देसाई का में आभारी हुं। ऑडियो केसेट्स MP3/VCD आदि ऑल्बम और प्रकाशनों में मेरे भानजे दिलीप भाई, चेतनभाई और मेरे बहनोई श्री अनंतराय बोटादरा का मुझे सहयोग प्राप्त हुआ है। पद्यरूपांतर और जैन भजनों का पूज्य बहिनश्री चंपाबहिन के समक्ष स्वाध्याय में सहकार बदल मेरे श्वसुर श्री व्रजलाल जेठालाल शाह, पंडित रत्न श्री हिंमतभाई शाह और ब्रह्मचारी कंचनबहिन का भी में आभारी हुं। अलंग शीप ब्रेकर श्री रमणिकभाई अजमेरा और शांत, सरल, स्वभावी शांताबहिन महेता का भी मुझे हंमेशा प्रोत्साहन मिलता रहा है। उन सब का में बहोत बहोत आभारी हूँ। हिन्दी पद्यानुवाद में हिन्दी वचनामृत पुस्तक का भी आधार लिया गया है। उनका भी मैं आभारी हूँ।

## ❑ अंतिम प्रार्थना क्या है ?

इस कार्य में पूज्य गुरुदेवश्री कानजी स्वामी और पूज्य भगवती स्वरूप बहिनश्री चंपाबहिन के प्रवचनों-वचनामृतों के भाव, शब्द, आशय को संपूर्ण रूप से यथा स्वरूप में रखने का प्रयास किया गया है। तो भी मेरी अल्पमति, अज्ञानता, प्रमाद, भाषाशास्त्र का अल्प अभ्यास, व्याकरण-छंद शास्त्र का अल्प अभ्यास, विद्वता का अभाव, अल्प शास्त्र अभ्यास आदि अनेक कारणों से कोइ भी त्रुटी रह गई हो तो इसके लिये मैं देव-गुरु-शास्त्र से क्षमा याचता हुं। यदि मुझे मेरी कोई त्रुटी के प्रति विद्वानों के द्वारा मार्गदर्शित किया जायेगा तो में भविष्य में उसको सुधारने का अवश्य प्रयास करुंगा। अंत में भावि तीर्थंकर श्री सूर्यकीर्तिनाथ एवं उनके भावि गणधर श्री देवकीर्तिनाथ के चरवारविंद में विनम्रभाव से नमन-वंदन करके उनके तत्वज्ञान का अभ्यास करके सर्व जीव स्वानुभूति प्राप्त कर के भविष्य में सिद्ध पदको प्राप्त करे ऐसी मेरी अभिलाषा है।

दिनांक १८-३-२००४, फाल्गुन कृष्णा ११
प्रकाशन दिनांक २१-४-२००४, बुधवार
(पूज्य सद्गुरुदेव श्री कानजीस्वामी का ११५वीं जन्मजयंती दिन, वैशाख शुक्ला द्वितीया)

''चैतन्यप्रिय''
सोनगढ़

# तुज

(तोटक)

तुज प्रवचनो बहु प्रिय मने, शबदे शबदे अमी वहेण वहे;
तुज वात महीं नर्युं सत्य ठरे, मुज नित नवीन संदेश कहे। १

तुज रूपक ने उपमा बधीए, मुज हृदय सोंसरवी नीकळे;
हळवे हळवे ज अखंड अने सत शासननी सहु वात कहे। २

तुज नियम सत्य सदाय भणे, पथ भूलेलने पथ सत्य दीए;
रसहीन संसार विषे रचतां, मनु बाळकने गम तुं ज दीए। ३

तुज नाम मने बहु प्रिय खरे, सुणतां मुज अंतर दाह दमे;
गुरुदेव! अमारा कहान तमे, जगना हितचिंतक नाथ तमे। ४

तुज उंमर ज्यां हजुं बाळ हती, न हती गम जैन खरा पथनी;
भणतां भणतां सत शोधननी, लगनी रहेती वळी आगमनी। ५

हती धून तने सत संगतणी, अने संगत तो साधु संत तणी;
सहु लोक महीं तुं भगत बनी, रचतो प्रभु गीत कवि तुं बनी। ६

बहु तें ग्रह्युं ने बहु तें ज कह्युं, बहु भेट धरी जगने शरणे;
तुज आतम काज शुं ना तें कर्युं! पुरुषार्थ करी समकित वर्युं! ७

तुज जीवनने सफळ करवा, बहु वर्ष लगी तप तें ज तप्युं;
सघळां बहुमान तजी दईने, वन जंगलमां जइ भेख धर्युं। ८

तुज दिल सदाय रह्युं तलसी, मुनि जंगलमां जई वास करी;
निज आतम ज्ञान प्रकाश करी, बस आनंदमां रहे मस्त बनी। ९

तुं सुखी, जगनुं दुःख तें ज हर्युं! तुं अमीरने आतम रत्न जड्युं!!
तुं ज चिंतक तें लख शास्त्र भण्यां! तुं कवि, पण चेतन काव्य रच्यां!! १०

('कहान महिमा' १९६६ में प्रकाशित)
रचना-दि. ५-३-१९६५, अड़ताला

'चैतन्यप्रिय'

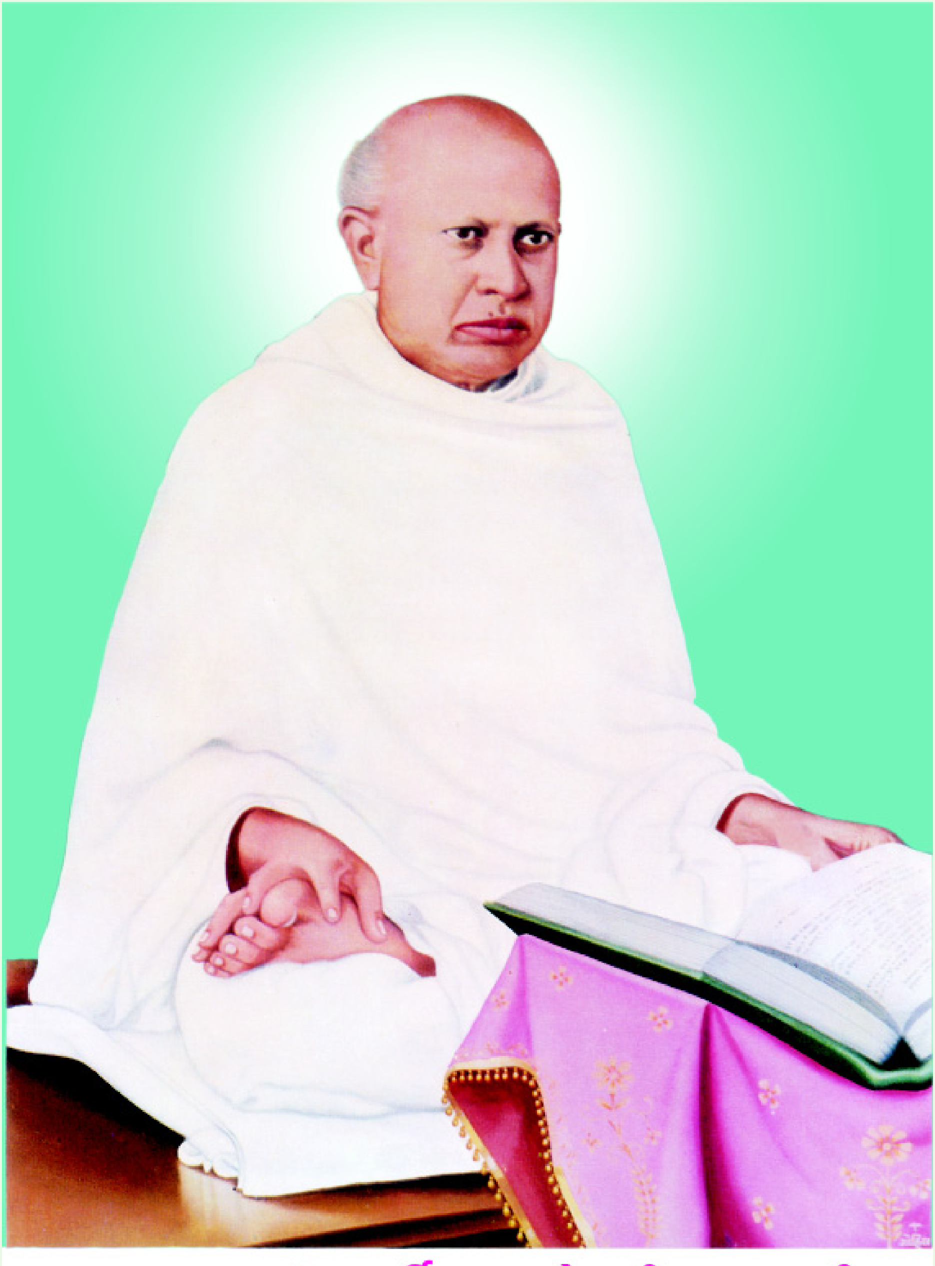

પરમ પૂજ્ય અધ્યાત્મમૂર્તિ સદ્‌ગુરુદેવ શ્રી કાનજીસ્વામી

परमपूज्य, परमोपकारी, परमकरूणावंत सद्‌गुरुदेव
श्री कानजी स्वामीने

# अर्पण

(प्रेट्रार्कन सोनेट) (शिखरिणी)

प्रभो! ज्ञानात्मा छो, अम सकळनां दुःख हरवां–
करूणा द्दष्टिथी गगन परथी खास ऊतरी,
अमोने संबोधी, लख जनमनां क्रूर भयथी–
ऊगारीने आप्यो सरळ पथ जे भान करवा;

संभाळीने पोषीशुं, कमळवत ना मेल अडवां–
दईशुं तेने हां, अहरनिश मिथ्यात्व रजथी,
अने जेवी रीते ध्वनित धसती दुःख हरती,
अमे तेवी रीते विकसीत थशुं मोक्ष वरवा

प्रभो वाणी मीठी श्रवण करतो एटलुं चहुं–
सुणेलां ऊद्‌गारो गत समय केरां हृद विषे-
संभाळी राखेलां बहु ज मुज पासे न बचत,

परंतु आ थोडां रचित श्रमथी मांड संघरु;
अहो! आजे ते सौ तुज चरण पासे धन दीसे!
प्रभो! स्वीकारी लो कवन मुज बनुं कृतकृत्य!

('कहान महिमा' १९६६ में प्रकाशित)
रचना–दीपोत्सवी-२०२२

'चैतन्यप्रिय'

પ્રશમમૂર્તિ ભગવતી પૂજ્ય બહેનશ્રી ચંપાબેન

(परमपूज्य भगवती स्वरूप बहिनश्री चंपाबहिन)

# ✽ धर्म माताने ✽

शेक्सपिरियन सोनेट

(पृथ्वी)

अहो! अमर आतमा मनुजरूप धारी अहीं
सदा अम सरीखनां छतररूप बनी रहो!
भले उदय-अस्त आ अम शरीर पामे कहीं,
बने भव अधिक ना वर तमारुं पाम्ये अहो!

अहीं अकळ योगथी पथ विदेहथी आवीने
मोक्षमग पथिक शा रगरगे विचरी रह्यां,
अने सद्गुरु तणुं अनुप वात्सल्य पामीने
अल्प समयमां तमे परमपद पामी गया।

रही अभय, एकलां, विरल पुरुषार्थे करी
गुरु किरण शब्दना गृही, पुनित प्रभावना,
अने तम समीपथी मधुर व्हेण पामी फरी
वहे सरित, मात! आश्रम महीं बाळा तणां।

नमुं चरण आपने! धरममात आपो मने–
भवो पटल छेदवां प्रबळ सामर्थ्य चेतने!

('कहान महिमा' १९६६ में प्रकाशित)
रचना-दि. १-३-१९६५, अड़ताला

'चैतन्यप्रिय'

# ચંપામૃત

## બહેન શ્રી ચંપાબહેનનાં વચનામૃતોનો સંપૂર્ણ પદ્યાનુવાદ

સ્વ. ધીરજલાલ ગંભીરદાસ ડેલીવાળા
જન્મ તા. ૧૭/૦૭/૧૯૩૨ સ્વ. તા. ૨૭/૦૧/૧૯૯૦

### સ્મરણાંજલિ, શ્રધ્ધાંજલિ, સ્મૃતિ, ઋણ આપૂર્તિ

સવિતા બહેન ધીરજલાલ (ધર્મ પત્ની)
કિરણ (પુત્ર), પ્રજ્ઞા (પુત્ર વધૂ)
રીટા મહેન્દ્ર કુમાર શાહ (પુત્રી)
શોભના નરેન્દ્ર કુમાર ભાયાણી (પુત્રી)
પલ્લવી પૃથ્વી કુમાર શાહ (પુત્રી)

ચીંતન, એકતા,
હેમાલી, શની,
પરાગ, જયુ,
જિમ્મી (પારસ)

# ચંપામૃત

(પૂજ્ય બહેનશ્રી ચંપાબહેનનાં વચનામૃતોનું સંપૂર્ણ, ક્રમિક, શાસ્ત્રીય પદ્યરૂપાંતર)

(છંદ : હરિગીતિકા)

૧ હે જીવ ના ગમતું તને જો ક્યાંય તો ઉપયોગને—
પલટાવીને આત્મામહીં ગમાડ, ગમશે ત્યાં તને. ૧

૨ આનંદ ભર્યો છે આત્મમાં, જરૂર ગમશે ત્યાં તને;
ના જગતમાં ગમશે તને, તું ગમાડ આત્મામાં હવે. ૧

૩ અંતરતણાં ઊંડાણથી હિત સાધવા જાગ્યો અને—
આત્માતણી લાગી લગન તો માર્ગ તેને સહજ છે. ૨

૪ આત્માતણી લાગી લગન માર્ગ જરૂર મળશે તને;
તું ધ્યેય રાખી આત્મનું દિન રાત ત્યાં લાગ્યો રહે. ૨

૫ હિત મારું કઈ રીત થાય ? કઈ રીત જાણું આત્મને ?
લગની વધારે પ્રયત્નથી તો માર્ગ તુજને સાંપડે. ૨

૬ જ્ઞાનીતણી પરિણતી સહજ, ના ગોખવું તેને પડે;
ના યાદ કરતાં ભેદજ્ઞાને એકધારા પરિણમે. ૩

૭ વૈરાગ્ય સહ જ્ઞાન પ્રોસ્તાહક બને, જો સાથમાં—
ને જ્ઞાન વિણ વૈરાગનું પરિણમન રુંધેલ કષાયમાં. ૪

૮ રે ! જ્ઞાન મારગ ઓળખે, વૈરાગ સાંચવે જ્ઞાનને,
જ્ઞાન સહિતનું જીવન તો વૈરાગ સહિત જ હોય છે. ૪

૯ અશરણ અહો ! સંસારમાં જન્મ મરણ ચક્ર ફરે;
છે શરણ દેવ—ગુરુ—ધરમ, લે શરણ ચેતન નાથને. ૫

૧૦ ગુરુદેવ દર્શાવેલ ચેતન શરણને લક્ષે કરી;
સંસ્કાર દૃઢ કર આત્મમાં, છે એજ કરવાનું નક્કી. ૫

૧૧ ‘સ્વભાવ’ ની વાતો સુણીને કાળજે ઘા લાગતો;
‘સ્વભાવ’ શબ્દ સાંભળું ત્યાં શરીરમાં ઉતરી જતો. ૬

૧૨ ‘સ્વભાવ’ રુંવાટે ચડે, ના ચેન કે સુખ લાગતું;
‘સ્વભાવ’ લીધે છૂટકો સમકિત ના દૂર લાગતું. ૬

૧૩ પૈસા વગર આ જગતમાં ના એક ક્ષણ પણ ચાલતું;
આત્માતણી પર્યાયમાં પુરુષાર્થ વિણ ના ચાલતું. ૭

૧૪ પુરુષાર્થ વિણ પર્યાય ના જ્યાં એક પણ પ્રગટી શકે;
પુરુષાર્થ વિણ રુચિ નહીં, પુરુષાર્થથી કેવળ લહે. ૭

૧૫ ગુરુદેવની વાતો ગ્રહણ કરવા જીવો તૈયાર છે;
ગુરુદેવની શ્રુતધારને ના છોડવી ક્ષણ પણ ગમે. ૮

૧૬ ગુરુદેવને શ્રુતલબ્ધિ છે ને યોગ છે વાણીતણો;
ગુરુદેવની શ્રુતધારમાં મારગ દીસે મુક્તિતણો. ૮

૧૭ પુરુષાર્થની કળ સાંપડે તો માર્ગની મૂંઝવણ ટળે;
જ્યમ ધન રળે ઢગલા બને ત્યમ કળ મળે અંતર ઢળે. ૯

૧૮ આત્માતણા પુરુષાર્થની કળ હાથ જો આવી ગઈ;
કો વાર ઢગલા થાય ને કયારેક સહજ જ તે રહે. ૯

૧૯ ભાસે બધાં સિદ્ધો સમા, ચૈતન્ય દેખીએ સર્વમાં;
રાગ યુક્ત વા દ્વેષમાં ના અમે કદી દેખી રહ્યાં. ૧૦

૨૦ માને ભલે તેઓ સદા નિજને ગમે તેવા, અરે !
ચૈતન્ય જ્યાં ઊઘડી ગયો, ચેતન સમા ભાસે બધાં. ૧૦

૨૧ આગ્રહ નહીં અપવાદ મારગ કે ન ઉત્સર્ગ માર્ગમાં;
પરિણામમાં આગળ વધે તે માર્ગને ગ્રહવો સદા. ૧૧

૨૨ એકાંત જો ઉત્સર્ગ કે અપવાદની હઠ જો કરે;
વસ્તુતણાં સ્વરૂપની ના ખબર છે તેને અરે ! ૧૧

૨૩ પ્રગટ થઈ જ્યાં દ્રવ્યદૃષ્ટિ ચેતન તળે દૃષ્ટિ રહે;
પરિણતિ બને ત્યાં એકરૂપે દૃષ્ટિ નહીં બીજે ભમે. ૧૨

૨૪ સ્વાનુભૂતિના કાળમાં કે હોય ઉપયોગ બહારમાં;
તળથી નહીં દૃષ્ટિ ખસે, ના તે બહારે પણ ભમે. ૧૨

૨૫ દૃષ્ટિ થતાં જ્ઞાની રહે ચેતનતણાં પાતાળમાં;
ઊંડી ગુફામાં વાસ કરીને સહજ દશાને સાધતા. ૧૨

૨૬ 'હું એક જ્ઞાયક, પર બધું' એમાં બધું આવી ગયું;
એ એકધારા રાખવી એમાં નથી અઘરું કશું. ૧૩

૨૭ 'હું જ્ઞાયકને આ પર બધું' બાકી બધું તે જાણવું;
ઊંડો નહીં તે ઉતરે તેથી બધું અઘરું દીસે. ૧૩

૨૮ 'હું છું' થતાં નક્કી, વધે છે જોર ત્યાં અસ્તિત્વમાં;
તે ઓળખે નિજને પ્રથમ ત્યાં જોર આવે ઉપરથી– ૧૪

૨૯ ઊંડાણથી પછી આવતું, તે હોય જો વિકલ્પમાં–
પણ ભાવના જો પ્રબળ તો સહજરૂપ–સાચું આવતું. ૧૪

૩૦ જિનદેવની વાણી મધુરી જોઈ દ્રાક્ષો ભાગતી;
ને શેરડી અભિમાન છોડી સાવ પિલાઈ જતી. ૧૫

૩૧ જિનવાણી જે જડ તેહને ઉપમા મળી કેવી મહા?
જિનદેવ ચેતનની મહિમા વાત શી કરવી, અહા ! ૧૫

૩૨ વૈરાગ્યનું જળ સીંચતા મુક્તિરૂપી અમૃત મળે;
છૂટે ફૂવારો સુખનો, રે ! રાગથી દુઃખ જ મળે. ૧૬

૩૩ જો મૂળ પકડે વૃક્ષનું તો હાથ સઘળું આવતું;
જ્ઞાયક સ્વભાવને પકડતાં ત્યમ હાથ સઘળું આવતું. ૧૭

૩૪ શુભ અશુભનાં પરિણામથી ના હાથ કશું એ આવતું;
સ્વભાવને આશ્રય જતાં શાંતિ સમાધાન થતું. ૧૭

૩૫ આકાશમાં ઊડતો પતંગનો દોર તો પકડેલ છે;
ત્યમ વિકલ્પ સમયમાં પણ દૃષ્ટિ તો દ્રવ્યે રહે. ૧૮

૩૬ ચૈતન્યના એ દોરને જો હાથમાં પકડેલ છે;
તો વિકલ્પના સમયમાં અભ્યાસથી દૃઢતા વધે. ૧૮

૩૭ જ્ઞાની ભલે આસક્તિમાં કે રાગમાં ઊભા દીસે;
અભિપ્રાયમાં તો રાગને જ્ઞાની ગણે કે ઝેર છે. ૧૯

૩૮ જ્ઞાની દીસે વિભાવમાં તો પણ અરે ! તે ભિન્ન છે;
અભિપ્રાયમાં તો રાગને કાળો સરપ જ્ઞાની ગણે. ૧૯

૩૯ મારે નથી પર ચીજની કંઈ લાલસા, આત્મા મળે;
એવી તમન્ના લાગતી તીખી, જરૂર મારગ મળે. ૨૦

૪૦ ચેતનતણી રિદ્ધિ સંબંધી વિકલ્પમાં ના અટકતો;
નિસ્પૃહ થઈ અસ્તિ જ માંગે, આતમા પ્રાપ્ત થતો. ૨૦

૪૧ ચેતનમહીંથી પરિણમે જે ભાવના ફળતી રહે;
જો ના ફળે તો જગત કે બ્રહ્માંડ આ શૂન્ય બને. ૨૧

૪૨ નષ્ટ થતું આ દ્રવ્ય પણ ના એમ તો બનતું કદી;
ચેતનતણાં પરિણામની સાથે સદા કુદરત રહી. ૨૧

૪૩ એવો જ કો વસ્તુતણો સ્વભાવ તીર્થંકર કહ્યો;
તેથી ન રાગે પરિણમો પણ ભાવના ચેતન લહો. ૨૧

૪૪ ગુરુદેવ તીર્થંકર થશે દીસે એવો ઉદય સદા;
વાણીતણો પણ યોગ છે સમજી જતાં જીવો બધાં. ૨૨

૪૫ છે જોર તેમાં એટલું આવે ન કંટાળો જરી;
રસકસ ભરી, રસ બસ વહે, રસ ના ટળે એ સાંભળી. ૨૨

૪૬ ઉપલક વિચારે વાંચતા ના કાંઈ જીવને લાધશે;
આંતરડીમાં જો ભાવના ઊઠે મારગ તો સરળ બને. ૨૩

૪૭ જ્ઞાયકતણો અંતઃસ્થળે જો ખૂબ મહિમા આવતો;
છે તો જ સાર્થકતા ખરી ને માર્ગ તેને લાધતો. ૨૩

૪૮ આત્માર્થી તું જો હોય તો સ્વાધ્યાય નિત્યે રાખજે;
વિચાર કરજે, મનનનો ખોરાક નિત્યે રાખજે. ૨૪

૪૯ વાંચન, મનન ને શ્રવણ શાસ્ત્ર વિષે બધું યે હોય છે;
શુભભાવથી સંતોષ ના તું ખટક અંદર રાખજે. ૨૫

૫૦ છે આ બધું પણ માર્ગ તો અંદર ખરે જુદો જ છે;
શુભાશુભથી છે માર્ગ જુદો એ ખટક સાથે રાખજે. ૨૫

૫૧ અંદર બિરાજે આતમા, સંભાળ કર, અંતરવળી–
તું તૃપ્ત થા, અનંતગુણ સ્વરૂપને જો તું જરી. ૨૬

૫૨ વીતરાગ આનંદથી ભરેલ સ્વભાવમાં, ક્રીડા કરી–
આનંદરૂપ સરોવરે કેલિ કરી, રમ તું તહીં. ૨૬

૫૩ ગુરુદેવને આત્મતણી પ્રાપ્તિ, અચંબો આજનો;
આ કાળમાં દુષ્કર ફળ્યું ને માર્ગ નવલો સાંપડયો. ૨૭

૫૪ માર્ગ બતાવ્યો છે તમે, મહિમા સદા ગવાય છે;
વર્ષો હજારો વીતશે મહિમા ગવાશે ત્યાં સુધી. ૨૭

૫૫ તુજ હાથમાં તુજ ભાવિનું ચિતરામણ સદા ભાખિયું;
'બંધ સમય જીવ ચેતવું, ને ઉદયમાં ઉચાટ શું' ? ૨૮

૫૬ ધીરું કરીને જ્ઞાનને અંદર વળીને જો ઠરી–
તું સૂક્ષ્મતાથી, આતમા પકડાઈ તો જાશે નક્કી. ૨૯

૫૭ તોડી વિકલ્પ જાળને છૂટો પડી જા તું ભલા;
ના જાળ તુજને ચોંટશે, પકડાઈ જાશે આતમા. ૨૯

૫૮ જ્યમ બીજ વાવે કાંઈ પણ ના પ્રગટ રૂપે ભાસશે;
વિશ્વાસ છે કે ડાળ, પાન, ફળ જરૂર વૃક્ષે આવશે. ૩૦

૫૯ ત્યમ મૂળ શક્તિરૂપ દ્રવ્યને ગ્રહણ કરવા થકી;
વિશ્વાસ રાખ્યે દ્રવ્યમાં પર્યાય નિર્મળ પ્રગટતી. ૩૦

૬૦ પ્રગટરૂપ કાંઈ દેખાતું નથી, શું પ્રગટશે કે નહીં ? લાગતું–
સ્વભાવના વિશ્વાસથી નિર્મળ પ્રગટવા લાગતું. ૩૦

૬૧ સમકિતદૃષ્ટિવંતને વૈરાગ્ય ને વળી જ્ઞાનની,
શકિત પ્રગટ એવી દીસે, નિર્લેપ ગૃહસ્થી પણ રહે. ૩૧

૬૨ ધારા ઉદય ને જ્ઞાનની બન્ને જુદી જુદી પરિણમે;
અસ્થિરતા, પુરુષાર્થની નબળાઈ, પણ જ્ઞાતા રહે. ૩૧

૬૩ સમકિતદૃષ્ટિવંતને ન બહાર સારું લાગતું;
ને ચીજ કો આ જગતની સારી ન સુંદર લાગતી. ૩૨

૬૪ ચેતનતણો મહિમા અને રસ લાગતાં, રસ તૂટતો,
બાહ્યના વિષયમાં ના ગમે, મહિમા ન કોનો લાગતો. ૩૨

૬૫ અભ્યાસ અનાદિ બહારમાં, અસ્થિરતા કારણે,
સ્વરૂપમાં ના રહી શકે, ઉપયોગ બહારમાં આવતો ૩૨

૬૬ પણ રસ નથી, નિઃસાર વત્, ફોતરા સમ, રસ—કસ વગર—
નું હોય એવા ભાવથી બહારમાં ઊભા દીસે. ૩૨

૬૭ લાગી ખરી તેને જ લાગી છે ન ખેદથી લાભ થશે;
પરિણમનવિણ વસ્તુ રહે ના, ના કૂટસ્થ પણ તે રહે. ૩૩

૬૮ શુભ—અશુભ તો થાશે ભલા જો છોડવા તે જઈશ તો;
શૂન્ય અરે ! શુષ્ક થશે ન ઉતાવળે કશું પામશે. ૩૩

૬૯ મુમુક્ષુ જીવને ઉલ્લાસનાં કાર્યો—મહીં સંતોષ ના;
'કરવાનું છે તે બાકી છે' એવી ખટક નિત્યે રહે. ૩૩

૭૦ જ્ઞાયક વસ્તુ ના હાથ આવે તેથી તે મૂંઝાય છે;
આડો ન અવળો જાય તે માર્ગ શોધી કાઢશે. ૩૩

૭૧ મુમુક્ષુ જીવ શરૂઆતમાં મૂંઝાય પણ ના મૂઢ બને;
સુખ ન મળે, ન બહારમાં પોષાય, પણ માર્ગ લહે. ૩૪

૭૨ પુરુષાર્થ ઉપડે જેટલો વીર્ય અંદર કાર્ય કરે;
ના હઠ કરે, ઝટપટ મળે, છે સહજ, ન ઉતાવળ કરે. ૩૪

૭૩ છે અશુભ ટેવ અનાદિની તો અશુભ ભાવ જ સહજ છે;
શુભ ભાવ વારંવાર કરે તો શુભ પણ સહજ બને. ૩૫

૭૪ સ્વભાવ છે પોતે સહજ ના ખ્યાલ તેનો આવતો;
ઉપયોગને સૂક્ષ્મ કરી સ્વભાવ સહજને પકડવો. ૩૫

૭૫ જે રુચિ ના પલટાવતો ઉપયોગનો પલટો ચહે;
ના જાણતો ક્રમ માર્ગનો, પલટે રુચિ તો સહજ છે. ૩૬

૭૬ 'જ્ઞાયક છું, અબદ્ધ છું હું' વિકલ્પ એ દુઃખરૂપ ગણે !
શાંતિ નથી મળતી, વિકલ્પ માત્રમા દુઃખ ભાસતું. ૩૭

૭૭ પુરુષાર્થ અપૂર્વ ઉપાડીને થાય લીન જો સ્વભાવમાં;
છૂટે વિકલ્પો જીવને વેદન વધે આનંદમાં. ૩૭

૭૮ જો આતમાની પ્રાપ્તિનો, નિશ્ચય દૃઢ મનમાં થયો;
પ્રતિકૂળ સંયોગમાં પણ પુરુષાર્થ કરડો ઉપાડતો. ૩૮

૭૯ સદ્‌ગુરુનાં ગંભીર ને સ્વરૂપલક્ષી રહસ્યથી–
મુમુક્ષુ મંથન ઊંડુ કરી મૂળ મારગ શોધતો. ૩૮

૮૦ સહજ અવસ્થા વિકલ્પથી ના જાળવી રાખવી પડે;
જો વિકલ્પથી રાખવી પડે તો તે દશા ના સહજ ખરે. ૩૯

૮૧ પ્રગટેલ જાળવી રાખવા જુદો પુરુષાર્થ જરૂરી નથી,
પુરુષાર્થ વધવાનો કરે તેથી દશા સહેજે ટકે. ૩૯

૮૨ સાધક દશામાં ભાવ શુભ આવે, પરંતુ છોડતો–
રોકાઈ ના તેમાં જતો, ના સાધ્ય લક્ષ છોડતો. ૪૦

૮૩ મુસાફર નગર એક છોડીને નગર બીજે જતાં–
વચ્ચે નગર આવે ભલે ના એક પળ રુકે છતાં. ૪૦

૮૪ લાગે ખરી તાલાવલી ને ભાવના વેદન સહિત;
માર્ગ જરૂર તેને મળે, કાર્ય બને કારણ સહિત. ૪૧

૮૫ રુચિસહિત શુભભાવ, વૈરાગ્યમય ઉપશમ હોય છે;
રુચિરહિત જે ભાવ તેમાં લૂખાશ–ચંચળતા રહે. ૪૨

૮૬ બાળક વિખૂટો માતથી પડતાં પૂછો ‘તુજ નામ શું ?’
તો એક ‘મારી બા’ જ બોલે, પૂછતાં પ્રશ્નો બહુ– ૪૩

૮૭ ત્યમ આતમાની રુચિ ને, છે ભાવના જ્ઞાયક તણી;
‘જ્ઞાયક સ્વભાવ’ ‘સ્વભાવ જ્ઞાયક’ એમ તે રટતો ફરી. ૪૩

૮૮ રુચિમાં ખરે લાગે જરૂરી પ્રાપ્તિ જરૂર તેને થશે;
ઘોલન, ખટક, ચિંતન સદા રાતદિન ચાલુ જ રહે. ૪૪

૮૯ જો હોય પ્રેમ ‘બા’ તણો તો યાદ ખટક રહ્યાં કરે;
જો આતમાનો પ્રેમ તો શુભમાં પણ ખટક રહ્યાં કરે. ૪૪

૯૦ 'બા'નો રહે છે પ્રેમ તો કુટુંબના ટોળે હો ભલે;
આનંદમાં પણ મન સદા 'બા મારી' 'મારી બા' ચહે. ૪૪

૯૧ એ રીત કો પ્રસંગમાં પણ 'આતમા'ની ખટક રહે;
'મુજ આતમા', 'મુજ આતમા' તો 'આત્મબા' જરૂર મળે. ૪૪

૯૨ તળિયાં તપાસી ઓળખ હવે ના અટક તું શુભ ભાવમાં—
કે ધારણા—પુરુષાર્થ થોડામાં 'ઘણું કર્યું' માન ના. ૪૫

૯૩ અજ્ઞાનીને કંઈ આવડ્યું કે ધારણાની યાદમાં;
અભિમાન બહુ થઈ જાય છે, ના સ્વરૂપનો છે ખ્યાલ જ્યાં. ૪૫

૯૪ બુદ્ધિતણાં ઉઘાડમાં સંતોષથી અટકી જતો;
પણ જ્ઞાની ને લક્ષ પૂર્ણ છે, ના અંશમાં અટકી જતો. ૪૫

૯૫ પર્યાયપૂર્ણ પ્રગટ થઈ, સ્વભાવ તે પ્રગટયો ખરે !
શું નવીન ત્યાં ? એમ માનીને અભિમાનમાં ના રાચશે. ૪૫

૯૬ આત્મમય જે જીવન કરવું, ઉપયોગ સૂક્ષ્મ ન હોય પણ—
કાર્ય ભલે ન કરી શકે, પ્રતીતિ સદા રહ્યાં કરે. ૪૬

૯૭ આ કાર્યથી છે લાભ મુજને આજ છે કરવું હવે;
એવી પ્રતીતિ જો રહે વર્તમાનમાં તે પાત્ર છે. ૪૬

૯૮ બંધન નથી ધ્રુવ દ્રવ્યને, વ્યવહારથી બંધન કહ્યું;
મુકત કહો, બંધન કહો, પર્યાયમાં સૌ જાણવું. ૪૭

૯૯ છે લાળનું બંધન, કરોળિયો ત્યાંથી છૂટી શકે;
જંજાળમાં ઘેરાયેલો પણ માનવી છૂટો જ છે. ૪૭

૧૦૦ ત્યમ જીવ પણ વિભાવ જાળ કરી ત્યહીં બંધાય છે;
પ્રયત્ન પણ જો તે કરે છૂટો જ તે જણાય છે. ૪૭

૧૦૧ ચેતન ખરે છૂટો જ છે, આનંદ—જ્ઞાનની મૂર્તિ ખરે;
જ્ઞાયક મૂર્તિ તે સદા ભૂલી ગયો નિજને ખરે ! ૪૭

૧૦૨ વિભાવ જાળને પાથરી તેમાં જ તે ફસાય છે;
પ્રયત્નથી છૂટો જ છે દ્રવ્ય નહીં બંધાય છે. ૪૭

૧૦૩ વિકલ્પમાં દુઃખ લાગતું, શાંતિ અને ત્યાં સુખ નથી;
એમ જીવને જો લાગતું માર્ગ જરૂર તે પામશે. ૪૮

૧૦૪ વિકલ્પમાં દુઃખ લાગતું, મંદ અન્યમાં શાંતિ ગણે;
પણ જો વિકલ્પ માત્રમાં દુઃખ માનશે, માર્ગ મળે. ૪૮

૧૦૫ આખા દિવસ આત્માર્થને પોષણ મળે, પરિણામ ક્યાં ?
પરિણામ બીજાં ક્યાં કર્યાં ? તપાસી વળ પુરુષાર્થમાં. ૪૯

૧૦૬ ખાસ કરવું ચિંતન અને ના વેગમાં કષાયના—
જાવું તણાઈ ત્યાં નહીં, થાવું ગુણગ્રાહી સદા. ૪૯

૧૦૭ સતની તું જિજ્ઞાસા કરે પ્રયત્ન બરાબર થશે;
મતિ સરળ—સવળી તુજ થતાં આત્મામહીં પરિણમી જશે. ૫૦

૧૦૮ સંસ્કાર જો ઊંડા ગયા તો છેવટે ગતિ અન્યમાં;
જરૂર સત ત્યાં પ્રગટશે સંસ્કાર ઊંડા નાખજે. ૫૦

૧૦૯ આકાશ ને પાતાળ બન્ને થાય છો ને એકઠા;
તું ધ્યેયને ચૂકીશ ના, પ્રયત્ન તુજ છોડીશ ના. ૫૧

૧૧૦ આત્માર્થને પોષણ મળે તે કાર્યને કરવું સદા;
ધ્યેયે ચડયો તે પૂર્ણ કરવું સિદ્ધિ થશે પ્રાપ્ત અહા ! ૫૧

૧૧૧ શરીર કરે શરીરનું ને આતમા આત્માતણું;
ભિન્ન અને સ્વતંત્ર એ કાર્ય કરે પોતાતણું. ૫૨

૧૧૨ શરીરાદિને નિજ માનીને સુખ કે ન દુઃખ તું માનજે;
જ્ઞાતા થઈને તું રહે, રે !દેહ તુજથી ભિન્ન જ ખરે. ૫૨

૧૧૩ તેં દેહ ખાતર ભવ અનંતા છે સદા વ્યતિત કર્યાં;
સંતો કહે—'તુજ આતમા ખાતર જીવન અર્પ હવે.' ૫૨

૧૧૪ નિવૃત્તિમાં પ્રવૃત્તિમય ના જીવન તેને છે ગમે;
રોગ મટતો હોય મટશે, બાહ્ય ઉપાધી ના ગમે. ૫૩

૧૧૫ અનુકુળતામાં ના સમજ પ્રતિકુળતામાં સમજ રે !
કો રીત સમજી વૈરાગ્યથી આત્મામહીં તું જા હવે. ૫૪

| | | |
|---|---|---|
| ૧૧૬ | ના ભાવના નિષ્ફળ જતી, ચેતનતણી સફળ જ સદા;<br>થોડો વખત લાગે ભલે પણ સફળ થાયે ભાવના. | ૫૫ |
| ૧૧૭ | ખોવાઈ ગયો આખો અરે ! ચીજ એક જ્યાં ખોવાઈ ત્યાં;<br>આખો જ તું ખોવાઈ ગયો તું પરમહીં રોકાઈ કયાં ? | ૫૬ |
| ૧૧૮ | રૂપિયામહીં, કે ઘરમહીં, તું દેહને પુત્રાદિમાં–<br>આખો ગયો રોકાઈ કયાં? ત્યાં આત્મ પ્રાપ્તિ શી રીતે? | ૫૬ |
| ૧૧૯ | મંથન કરવું તત્ત્વતણું શ્રી ગુરુ મુખેથી જે મળ્યું;<br>નિવૃત્તિમાં વાંચન કરી જાગૃત રાખજે લગનીને. | ૫૭ |
| ૧૨૦ | ધ્યેયપૂર્વક આત્મની પરિણતિમહીં રસ લાવીને;<br>વિચાર મંથન જો કરે તો માર્ગ અંતરથી મળે. | ૫૭ |
| ૧૨૧ | દૃષ્ટિ અપેક્ષા જ્ઞાનીને છે રાગ સાથે ભિન્નતા;<br>તે જ્ઞાનમાં જાણે ખરે, છે રાગ નિજ પર્યાયમાં. | ૫૮ |
| ૧૨૨ | જે સ્થૂળ નિજ પરિણામને જો જ્ઞાન ના પકડી શકે;<br>તે સૂક્ષ્મ નિજ પરિણામને કયાંથી કહો પકડી શકે ? | ૫૯ |
| ૧૨૩ | ને સૂક્ષ્મ ના પકડાય તો સ્વભાવ કયાંથી પકડશે ?<br>તીક્ષ્ણ બની, સ્વ પકડતાં તે ભેદજ્ઞાની થશે. | ૫૯ |
| ૧૨૪ | સંસારમાં ભમતો રહ્યો, સુખની કરી છે ઝંખના;<br>વિષયો પ્રતિ તે દોડતો અનંત દુઃખ વેઠયા, અહા ! | ૬૦ |
| ૧૨૫ | કો વાર સુખ દેખાડનારા જો મળ્યા શંકા કરી;<br>અવગણના કરી તેહની સ્વરૂપ પ્રાપ્તિ ના થઈ. | ૬૦ |
| ૧૨૬ | પુરુષાર્થ વિણ અટકી ગયો, થોડો કર્યો ત્યાંથી પડયો;<br>એ રીત સ્વરૂપ પ્રાપ્તિમાં આ જીવ બહુ અટકી ગયો. | ૬૦ |
| ૧૨૭ | પુણ્યોદયે આ દેહને પામ્યો, સદ્‌ગુરુ મળ્યા;<br>પુરુષાર્થ જો ના આ ભવે તો કયા ભવે પામીશ, હા ! | ૬૦ |
| ૧૨૮ | હે જીવ તું પુરુષાર્થને રે ! કર હવે ! તું કર હવે !<br>આ જોગવાઈ નહિ મળે સ્વરૂપ કોણ સમજાવશે ? | ૬૦ |

૧૨૯ જો તાપ લાગ્યો છે ખરો, સંસારથી કંટાળતો;
વિભાવથી કંટાળતો તો માર્ગ જરૂર તે પામતો. ૬૧

૧૩૦ રુચિ હોય ત્યાં વીર્ય વળે, રુચિ જ્યાં સમય ત્યાં જાય છે;
કારણ જેવું આપતો તેવું જ કાર્ય થાય છે. ૬૧

૧૩૧ જ્ઞાયક ઘૂંટણ નિરંતરે, દિનરાત પાછળ જો પડે;
વસ્તુતણી પ્રાપ્તિ પછી ના થાય એવું ના બને. ૬૧

૧૩૨ જ્ઞાયકલક્ષે જો સાંભળે, ચીંતન કરે, મંથન કરે;
સમકિત જો ના થાય તો સન્મુખતા તો થાય છે. ૬૨

૧૩૩ સંસ્કાર ઊંડા નાખતો, ઉપયોગને પણ ફેરવે;
બારીકને સૂક્ષ્મ કરે વધતા સુદૃષ્ટિ થાય તે. ૬૨

૧૩૪ છે, બીજ વાવે જેહવું તેવું જ વૃક્ષ થાય છે;
આંબો અને આંકોલિયો નિજ બીજમાંથી થાય છે. ૬૩

૧૩૫ કારણ રહે છે જેહવું તેવું જ કાર્ય થાય છે;
પુરુષાર્થ સાચો હોય તો સાચું જ ફળ પ્રાપ્ત બને. ૬૩

૧૩૬ અંદરમહીં ચેતન ખરે નમસ્કાર કરવા યોગ્ય છે;
છે તેજ મંગળ, તેજ ઉત્તમ, તેનું શરણ તું ધારજે. ૬૪

૧૩૭ ને પાંચ જે પરમેષ્ઠી તે બાહ્ય નમનને યોગ્ય છે;
કરી સાધના આત્માતણી મંગળ, શરણ ઉત્તમ ખરે ! ૬૪

૧૩૮ દેવ–ગુરુ ને શાસ્ત્રતણો મહિમા અને વાણી ભલી;
જાગૃત કરે મહિમા ચેતને તે તેહમાં નિમિત્ત બની, ૬૫

૧૩૯ સંસ્કાર ઊંડા નાખવામાં પણ સદા નિમિત્ત થતાં;
ને સ્વરૂપની પ્રાપ્તિમહીં પણ નિમિત્ત તેને જાણવાં. ૬૫

૧૪૦ ભક્તિ–ઉલ્લાસ બહારમાં આત્માતણો આનંદ ના;
તળમાંથી જે આવે ખરો આનંદ તેને જાણ, હા. ૬૬

૧૪૧ શાંતિ દરેક પ્રસંગમાં શાંતિ અને શાંતિ જ છે;
છે લાભ દાયક તે સદા, છે જયાં સદા શાંતિ રહે. ૬૭

૧૪૨ ગુરુદેવની વાણી મળી અનુપમ મહા !સૌભાગ્ય તે;
માર્ગ મળ્યો, વાણી મળી મુમુક્ષુતણું સૌભાગ્ય એ. ૬૮

૧૪૩ દરરોજ પ્રાતઃકાળ ને મધ્યાહ્‌ન એ બે વખતમાં;
તત્ત્વ ઉત્તમ સાંભળો સૌભાગ્ય એથી શું વદું ? ૬૮

૧૪૪ લાગે અપૂર્વ વાત ને પુરુષાર્થથી જો સમીપમાં—
જો જાય તો ફેરા ટળે અદ્‌ભૂત એવી વાણી મહા ! ૬૮

૧૪૫ શ્રવણનું સૌભાગ્ય મળીયું સફળ કરવું યોગ્ય છે;
આ કાળમાં ગુરુવાણીથી ભગવાન વિરહ ભૂલાય છે. ૬૮

૧૪૬ રાખે પ્રયોજન આત્મનું, રસ લાગતો જ્યાં આત્મનો;
વિભાવનો ત્યાં રસ બધો નીતરી સત્વર જાય તો. ૬૯

૧૪૭ આત્મામહીં બધું જ છે, બહારમાં કંઈ છે નહીં;
કંઈ જાણવા ઈચ્છે ખરે, કર સાધના આત્માતણી. ૭૦

૧૪૮ જ્યાં પૂર્ણતા તુજ પ્રગટશે, લોકાલોક ત્યાં જ્ઞેય થશે;
જગત તો રહેશે જગતમાં ને જ્ઞાનમાં બધું જ્ઞેય થશે. ૭૦

૧૪૯ જે જાણતું તે તત્ત્વ પૂર્ણ થતાં સૌને જાણશે;
ને સાથમાં આનંદ જેવી નવીનતાઓ પ્રગટશે. ૭૦

૧૫૦ છે ધન્ય તે નિર્ગ્રંથ કેવળ જ્ઞાન તળેટી જાણવી;
નિજ ગુણ ને પર્યાયનો પરિગ્રહ ઘટે, ન વિભાવનો. ૭૧

૧૫૧ બાહ્ય પરિગ્રહ દેહનો પ્રતિબંધ વિણ છે સહજતા;
ના બોધનો પ્રતિબંધ છે, સ્વરૂપલીનતા હોય ત્યાં. ૭૧

૧૫૨ અખંડને ગ્રહણ કરી પ્રમત—અપ્રમતમાં જે ઝૂલતા;
મુનિરાજ તે, સ્વરૂપમાં નિરંતર જાગ્રત દશા. ૭૨

૧૫૩ મુનિરાજ છે જ્યાં જાગતા ત્યાં જગત તો ઊંઘે સદા;
જ્યાં જગત છે જાગે સદા, મુનિરાજ છે ત્યાં ઊંઘતા. ૭૨

૧૫૪ નિવૃત્ત છે દ્રવ્ય સદા અવલંબને ત્યાં દૃઢપણે;
ભાવિતણાં વિભાવથી નિવૃત્ત થાવ હવે તમે ! ૭૩

૧૫૫ મુક્તિ રહી છે હાથમાં એવા મહા મુનિરાજને–
તીક્ષ્ણ થયેલા જ્ઞાનથી પ્રત્યાખ્યાન વર્તે છે સદા. ૭૩

૧૫૬ જો તારી ગતિ વિભાવમાં, ચેતનમહીં લગાડ તું;
સ્વભાવમાં આવીશ તો સુખ ગુણોતણી વૃદ્ધિ થશે. ૭૪

૧૫૭ વિભાવમાં તું જઈશ તો ગુણોતણી હાનિ થશે;
ને હાની દુ:ખની થાય છે, સ્વરૂપમાં ગતિ કર હવે. ૭૪

૧૫૮ ચૈતન્યધામને ઓળખે સ્વરૂપમાં સૂઈ જાય તે;
તેને કદી બહારમાં ના આવવું ગોઠે અરે ! ૭૫

૧૫૯ પોતાતણાં જે મહેલમાં સુખેથી રહેતા હોય છે;
રાજા ખરે તે બહારમાં ના આવવા ઈચ્છા કરે. ૭૫

૧૬૦ ચેતનતણાં જે મહેલમાં બિરાજતાં, બહારમાં–
મુશ્કેલ તેનું આવવું બીજા સમાન છે લાગતું. ૭૫

૧૬૧ 'રેતી ઉપાડે આંખથી' એવું જ લાગે આંકરું;
સ્વરૂપમાં આસકતને આસક્તિ ના છે બહારમાં. ૭૫

૧૬૨ છબી પાડવામાં આવતા મુખભાવ જેવા હોય છે;
કાગળમહીં ચીતરાય તે ના દોરવા જાવું પડે. ૭૬

૧૬૩ એ રીત કરમ ઉદયતણાં ચિતરામણો સામે રહે;
ત્યારે સમજવું એમ કે ભાવો કર્યા ચિતરાય તે. ૭૬

૧૬૪ ના આતમા પ્રવેશીને કર્મોમહીં કરતો કશું;
પણ ભાવને અનુરૂપ ત્યાં ચિતરામણો થઈ જાય છે. ૭૬

૧૬૫ દર્શન–જ્ઞાન ને ચારિત્રરૂપ પરિણમન જો જીવ આચરે;
સંવર–નિર્જરા થાય તો, શક્તિમાં રહ્યું વ્યકત બને. ૭૬

૧૬૬ એકત્વ ને વિભકતની ના વાત છે રુચિ કદી;
છે ફોતરાં તે ખાંડતો, કસ જ્યાં રહ્યો ના શોધતો. ૭૭

૧૬૭ ખાંડે ફોફાં રાગાદિનાં દાણો નહીં ત્યાંથી મળે;
એકત્વ બુદ્ધિ પરતણી જો છોડ તો કાર્ય બને. ૭૭

૧૬૭ અબદ્ધ, સ્પૃષ્ટ, અનન્ય ને અવિશેષ, નિયત, અસંયુક્ત ને;
(A) એકત્વ પરનું તોડીને, જાણે જુદો કાર્ય બને. ૭૭

૧૬૮ જાત્યંતર લીલા સ્વરૂપની, મુનિરાજ ચેતન બાગમાં–
રમતાં કરે છે નાશ કરમનાં ફળતણો ક્ષણવારમાં ૭૮

૧૬૯ આસક્તિ પરની છોડીને સ્વરૂપમાં લીન થઈ ગયા;
સ્વરૂપમાં મંથર થયાં, સ્વરૂપ આસન લગાવતાં. ૭૮

૧૭૦ સ્વરૂપ છે નિદ્રા અને સ્વરૂપનો આહાર છે;
સ્વરૂપમાં લીલા કરે સ્વરૂપ વિચરણ તે કરે. ૭૮

૧૭૦ સંપૂર્ણ તે શ્રામણ્યને પ્રગટાવી લીલા માત્રમાં–
(A) શ્રેણી અહો ! માંડી તુરત કેવળ જ્ઞાનને પ્રગટાવતાં. ૭૮

૧૭૧ શુદ્ધ સ્વરૂપી આત્મમાં પેસી ગયો વિકાર ના;
ને ભેદજ્ઞાને જ્ઞાનરૂપી ચેતનમહીં પ્રતિબિંબ, હા ! ૭૯

૧૭૨ તું જ્ઞાન ને વૈરાગ્યની શક્તિ થકી પુરુષાર્થને–
પ્રગટ કરી દૃષ્ટિ વડે તું ઉપર આવી જા હવે. ૭૯

૧૭૩ ચેતન સદા નિર્મળ, નહીં કર્મો તણાં ત્યાં ઉદય છે;
સત્તા નહીં, અનુભાગ ના, વિકલ્પ સૌ જુદા જ છે. ૭૯

૧૭૪ નિષેધ–વિધિ જાળને તું છોડી અંદર જા હવે;
‘બાંધેલ હું–બાંધેલ ના’ વિકલ્પ રહિત થા હવે. ૮૦

૧૭૫ સ્વભાવથી નિર્મળ એવા સ્ફટિકમાં ફૂલ યોગથી–
દેખાય છે રંગો અરે ! ના સ્ફટિક ત્યાં રંગાય છે. ૮૧

૧૭૬ સ્વભાવથી નિર્મળ એવા આત્મમાં ક્રોધાદિનાં–
ભાવો થતા દેખાય પણ ભિન્ન સદા આત્મા, અહા ! ૮૧

૧૭૭ ના મલિનતા સ્વભાવમાં સ્વભાવ ના બદલાય છે;
પરમાણુ જયમ પલટી કદી વર્ણાદિ રહિત ના થાય છે. ૮૧

૧૭૮ પરથી કરેલ એકત્વ ને છે તોડવાની વાત આ;
અંદર કરે પ્રવેશ તો છૂટું પડી જાશે બધું. ૮૧

૧૭૯ અરીસા સમાન છું, સ્વચ્છ હું, વિકલ્પથી ન મલિન છું;
નિર્વિકલ્પ આનંદઘન ને એવો જ હું પવિત્ર છું. ૮૨

૧૮૦ વિકલ્પથી મલિન ગણી ભ્રમણામહીં છેતરાય છે;
અરીસા સમી એ જાતિ પણ ના સ્વચ્છ તેને માનતો. ૮૨

૧૮૧ નિર્મળતાને ઓળખે પર્યાય નિર્મળ પ્રગટશે;
અંદરમહીં છે જ્ઞાન, ને આનંદ—નિર્મળતા ખરે. ૮૨

૧૮૨ અંતરમહીં આ આતમા મંગળ સ્વરૂપી છે સદા;
પર્યાય મંગળ પ્રગટતી આશ્રયથકી મંગળતણાં. ૮૩

૧૮૩ છે આતમા મંગળ ઉત્તમ, નમન કરવા યોગ્ય છે;
પ્રતીતિ અને એ ધ્યાનથી ઉત્તમતા તુજ પ્રગટશે. ૮૩

૧૮૪ 'હું ઉદાસી જ્ઞાતા જ છું' નિવૃત્ત દશા શાંતિ મળે;
નિજ જાણી અકર્તા થાય તો સાધક દશા શરૂઆત છે. ૮૪

૧૮૫ દૃષ્ટિ ધરે દ્રવ્ય પરે સમકિત—જ્ઞાન પ્રગટતું;
ના પ્રગટે તે જ્યાં સુધી સ્વાધ્યાય—મહિમા રાખ તું. ૮૫

૧૮૬ જે હોય જેમાં તે મહીંથી તે જ છે રે ! આવતું;
જે હોય ના જે મહીં ત્યાંથી તે કદી ના આવતું. ૮૫

૧૮૭ અખંડના આશ્રય થકી પ્રગટે બધું, ગુરુદેવ તો—
માર્ગ કહે, સમકિત ના રે કોઈ છે આપી જતું. ૮૫

૧૮૮ પ્રતિબિંબ ટાણે પણ અરીસે નિર્મળતા તો તેવી જ છે;
વિભાવમાં પણ આતમા નિર્મળતાથી ભરેલ છે. ૮૬

૧૮૯ નિર્મળતા ચેતનતણી તુજ દૃષ્ટિ તો જોતી નથી;
તે દૃષ્ટિને તું છોડ હવે વિભાવમાં જે તન્મય બની. ૮૬

૧૯૦ પ્રયોજન શું પર ચિંતાતણું ? મુજ આતમા છે એકલો;
છે એમ જ્ઞાની જાણતો ચિંતા નહીં પર રાખતો. ૮૭

૧૯૧ ભૂમિકાનુસારે શુભ ભલે ભાવો તહીં આવે અરે !
એકલપણાની પણ અહા ! પ્રતીતિ નિરંતર છે રહે. ૮૭

૧૯૨ ના લેપ છે, જનમ નહીં, ના મરણ ચેતન દેવને;
ચેતન સદા ચેતન રહે, ના તત્ત્વ નવલું પ્રગટશે. ૮૮

૧૯૩ દ્રવ્ય–ક્ષેત્ર–કાળ–ભાવથી સહુ ઉદયમાં નિર્લેપ છો;
ચિંતા પછી શાની તને ? મૂળ તત્ત્વમાં ન પ્રવેશ કો. ૮૮

૧૯૪ મુનિરાજને સ્વરૂપમાં છે રમણતા જાગ્રત રહે;
આનંદ ને જ્ઞાનાદિ ગુણથી રચીત છે સ્વરૂપ તે. ૮૯

૧૯૫ પર્યાયમાં સમતા રહે, ન વિકલ્પ,શત્રુ–મિત્ર ના;
નિર્માન છે, જો દેહ પણ જાયે ન માયા રોમમાં. ૮૯

૧૯૬ હો સોનું કે હો તણખલું છે બેય સરખાં લાગતાં;
સંયોગ હો અનુકૂળ કે પ્રતિકૂળ, છે કંઈ ભેદ ના. ૮૯

૧૯૭ અનુકૂળમાં ખેંચાય ના, પ્રતિકૂળતામાં ખેદ ના;
આગળ વધે સમરસીપણું વધતું જતું દેખાય છે. ૮૯

૧૯૮ અભિલાષરૂપ ક્ષુધાથકી દુઃખિત મુસાફિર અરે !
વિષયોમહીં ના રાચ તું, ના ભૂખ ત્યાં તુજ ભાંગશે. ૯૦

૧૯૯ અમૃતફળોનું વૃક્ષ અંદરમાં પડયું તું જો જરા;
ફળ મધુરનો રસ ચાખતાં તૃપ્ત થશે ક્ષણવારમાં. ૯૦

૨૦૦ ચૈતન્યચંદ્ર આતમા અવલોકતા મુનિરાજને–
વૈરાગ્ય ઉછળી જાય છે, ના થાક ના ધરપત ખરે. ૯૧

૨૦૧ રોગમૂર્તિ આ દેહના રોગો બધા પૌદ્ગલિક છે;
ભિન્ન રહે, સંસારરૂપ પણ રોગ છે પર્યાયમાં. ૯૨

૨૦૨ 'હું સહજ જ્ઞાયક મૂર્તિ છું' એ ભાવના લઢણા રહે;
ઘોલન, મનન પણ તેહનું તો રોગ સંસારતણો જશે. ૯૨

૨૦૩ દ્દષ્ટિ સદા જ્ઞાનીતણી છે દ્રવ્ય સામાન્યે રહે;
ધારા સદા ભેદજ્ઞાનની છે સતત ત્યાં વહ્યાં કરે. ૯૩

૨૦૪ ધ્રુવ તત્ત્વમાં એકાગ્ર તો પર્યાય નિર્મળ પ્રગટતી;
ધ્રુવ તત્ત્વમાં એકાગ્ર તો વિભાવ ના રહેશે જરી. ૯૪

૨૦૫ મુનિઓ અસંગપણે રહી આત્માતણી કરે છે સાધના;
સ્વરૂપમાં ગુપ્ત રહે ભાવલિંગ સ્વસંવેદને. ૯૫

૨૦૬ છે સાર એક જ આતમા બીજું બધું નિઃસાર છે;
ચીંતા બધી તું છોડીને આત્માતણી ચિંતા કરે. ૯૬

૨૦૭ કરીને ગમે તે તું ચેતન સ્વરૂપી આત્મને પકડ;
સંસારરૂપ આ મગરના મુખમાંથી તો છૂટી શકે. ૯૬

૨૦૮ જાણે પર પદાર્થ પણ ઉપાધી ન આવે જ્ઞાનમાં—
જાણે ત્રિકાળ—ત્રિલોકને એ સર્વ જ્ઞાનની સિદ્ધિ છે. ૯૭

૨૦૯ વીતરાગ જે થઈ જાય તેને સ્વભાવ પૂર્ણ પ્રગટ થતો;
તે જ જ્ઞાનની પરિપૂર્ણતા—સર્વજ્ઞતા સિદ્ધ બને. ૯૭

૨૧૦ દૃષ્ટિ વળી તું જ્ઞાનને યથાર્થ સદાયે રાખજે;
ભૂલી ગયો તુજને જ તું મળ્યા ગુરુ ના દરકાર છે. ૯૮

૨૧૧ રુચિ હોય જો જીવને ખરે ગુરુવચનને વિચારશે;
સ્વીકાર કરીને તેહનો ચેતનતણી ઓળખ કરે. ૯૮

૨૧૨ છે પંખીના મેળા સહુ, થયાં એકઠાં, અલગ થશે;
શાશ્વત એક, અધ્રુવ બધું, કલ્યાણ કરી લેવું હવે. ૯૯

૨૧૩ ‘આદિ નહીં, ના અંત છે, મુક્ત ખરે, શુદ્ધ જ છે;’
તે આત્મ પરે દૃષ્ટિ કરે પર્યાય શુદ્ધ તો પ્રગટશે. ૧૦૦

૨૧૪ છું મુક્ત હું, પર્યાયને જો આવવું તો આવશે !
પર્યાય ઉપેક્ષિત થતાં તે શુદ્ધ થઈને પ્રગટશે ! ૧૦૦

૨૧૫ સમ્યગ્દૃષ્ટિવંતને નિઃશંકતા એવી રહે;
બ્રહ્માંડ ચૌદ ફરે ભલે, કલ્યાણ કરી લેવું હવે. ૧૦૧

૨૧૬ છે આતમા ઉત્તમ સહુમાં, આશ્ચર્યકારી તે જ છે;
વસ્તુ ન જગમાં એક ઊંચી, લઈ ન કોઈ જાય છે. ૧૦૨

૨૧૭ જે જાય છે છૂટી શરીર તે આતમાથી તુચ્છ છે;
રે છોડતા તેને પછી ડર કેમ તુજને થાય છે? ૧૦૨

૨૧૮ સમ્યગ્દૃષ્ટિવંતને એવી રહે છે ભાવના;
ઠરી જાવ હું ચેતનમહીં ના અન્ય કોઈ ચાહના. ૧૦૩

૨૧૯ ‘શુદ્ધ છું’ સ્વીકારતાં રચના બને પર્યાયની;
‘શુદ્ધ સદા’, દૃષ્ટિ સમાન સદા સૃષ્ટિ થતી. ૧૦૪

૨૨૦ આ આતમા ત્રિકાળ જ્ઞાયક વેષને ધારણ કરે;
પરમાર્થથી જ્ઞાયકમહીં પર્યાય વેષ ના હોય છે ૧૦૫

૨૨૧ ‘ના મુનિ, કેવળજ્ઞાની કે સિદ્ધ’ કશું આતમમાં નહીં;
જ્ઞાયક સદા જ્ઞાયક રહે, પર્યાય અપેક્ષા છે નહીં. ૧૦૫

૨૨૨ છે આતમા તારો સદા તે પ્રાપ્ત કરવો સુગમ છે;
ના થાય પર પોતાતણો, આકુળતા રહેશે તને. ૧૦૬

૨૨૩ શાશ્વત શુદ્ધિધામ એવો આતમા બળવાન છે;
દૃષ્ટિ પ્રગટતાં તેહની પર્યાય શુદ્ધ પ્રગટ થશે. ૧૦૭

૨૨૪ વિકલ્પના ભેદો વડે પર્યાય શુદ્ધ ન પ્રગટતી;
ગ્રહણ કરવો એકને દૃષ્ટિ સહિત, જ્ઞાન વિવેકથી. ૧૦૭

૨૨૫ ના જગતમાં છે કોઈ વસ્તુ અધિક ચેતન દ્રવ્યથી;
તું ઠર અને નિવાસ કર, આતમમહીં, ચેતનમહીં. ૧૦૮

૨૨૬ છે આતમા સમૃદ્ધ, અનંતા ગુણ દિવ્ય જ્ઞાનથી;
ચેતન અહો !ભરપૂર છે રિદ્ધિ–સમૃદ્ધિ અગાધથી. ૧૦૮

૨૨૭ છે આતમા તીરથ પરમ પવિત્ર, એમાં સ્નાન કર;
ભરપૂર છે પવિત્રતાથી અંદર સદા ઉપયોગ ધર. ૧૦૯

૨૨૮ તરબોળ બન ગુણોમહીં, કર સ્નાન આતમ તીરથમાં;
શુદ્ધ બને પર્યાય ને મલિનતા ટળી જાય ત્યાં. ૧૦૯

૨૨૯ છે પરમ પુરુષ નિકટ તારી પણ નથી જોયા કદી;
દૃષ્ટિ સદા ભટકી રહી તારી બહાર–બહારમહીં. ૧૧૦

૨૩૦ પરમાતમા આ જગતમાં ઉત્તમ સહુથી જણાય છે;
પોતે જ તું પરમાતમા, તુજ આતમા ઉત્તમ ખરે. ૧૧૧

૨૩૧ વિભાવ બહુ, બહુ કાળ વીત્યો સહજ તત્ત્વ અખંડ છે;
પારિણામિક ભાવ ને ગુણ કો ન ખંડિત થાય છે. ૧૧૨

૨૩૨ મુનિ અંતર મુહૂર્તમાં સ્વભાવ ડૂબી જાય છે;
વસવાટ અંદર મહલમાં ના આવવું બહાર ગમે. ૧૧૩

૨૩૩ અંદર રહે અનુભૂતિમાં બાહ્ય જતાં ચિંતન કરે;
ના અન્ય કોઈ પ્રકારનો બોજો લઈ મુનિ વિચરે. ૧૧૩

૨૩૪ સાધક દશા વધતી ગઈ દ્રવ્યે થયાં કૃતકૃત્ય ને–
પર્યાયમાં પણ તેમને કૃતકૃત્યતા વર્તી રહે. ૧૧૩

૨૩૫ ભગવાનનો જો પ્રેમ તો ભગવાનને જોયા કરે;
જો ચેતને પ્રેમી બને, 'ચૈતન્ય' , 'ચૈતન્ય' તે રટે. ૧૧૪

૨૩૬ ગુણભેદ પર દૃષ્ટિ થતાં ઉપજે વિકલ્પો સામટા;
ના થાય નિર્વિકલ્પતા ના થાય સમરસતા જરા. ૧૧૫

૨૩૭ ચેતન ગ્રહે સામાન્યથી તો મોક્ષમગ પ્રગટી જશે;
જુદું જુદું જો ગ્રહણ કરશો, અશાંતિ જ તો ઊપજશે. ૧૧૫

૨૩૮ આ આતમા સંયોગમાં હો કોઈ પણ પ્રકારનાં;
પોતાતણી શાંતિ ખરી પ્રગટ કરી શકતો સદા. ૧૧૬

૨૩૯ વસ્તુતણો સ્વભાવ છે નિરાલંબન રહેવું સદા;
આશ્રયવિણ પરચીજના, આત્મામહીં રહેજે સદા. ૧૧૭

૨૪૦ આતમા સદા છે એકલો સ્વયંભૂ પોતેજ છે;
મુનિઓતણા મનની ગતિ નિરાલંબન તું જાણજે. ૧૧૭

૨૪૧ સમ્યગ્દર્શન–જ્ઞાનની ચારિત્રની જે ચાલ તે;
નિરાલંબન જો પ્રગટ થઈ તો કોઈ ના રોકી શકે. ૧૧૭

૨૪૨ પરમાત્મનું ધ્યાન ધરે તો મોક્ષપદ પ્રાપ્ત થશે;
શુદ્ધાત્મનું ધ્યાન કરે તો શુદ્ધતા તેને વરે. ૧૧૮

૨૪૩ ગુરુદેવની વાણી થકી જેનું હૃદય ભેદાય છે;
આત્માતણી લાગી લગન તો ચીત્ત ન બીજે જાય છે. ૧૧૯

૨૪૪ લાગી લગન જયાં આત્મની, ના અન્ય તેને જોઈશે;
પરમાતમાથી અન્ય ઓછું ના કશું તેને ખપે. ૧૧૯

૨૪૫ પરમેષ્ઠીનું ધ્યાન ધરે શાંતિ નહીં પણ આવતી;
મૂળતળમાંથી આવતી જે શાંતિ ખરી તે જાણવી. ૧૨૦

૨૪૬ ફળફૂલ મનહર વૃક્ષ સમ ગુણનિધિ તું અદ્ભુત છે;
આશ્રયમાં રમતાં તને શાંતિ ખરી ત્યાં પ્રગટશે. ૧૨૦

૨૪૭ કરુણા કરી આચાર્યદેવ જગાડતા રે ! ભાઈ તું–
જાગ્રત થા ! રે ! ઊંઘમાં, દિશા નહીં સૂઝે કશી ! ૧૨૧

૨૪૮ રખડી રહ્યો તું ભૂલથી સ્વતંત્ર છો તું રખડ ના;
તું રખડવાના સમયમાં પણ શુદ્ધ છો તું જો ભલા. ૧૨૧

૨૪૯ મહિમાવંતને બતાવીએ ઊંડો ઊતરીને જો ભલા.;
ઓળખઅસલતુજતત્ત્વને,દુઃખટાળતું,સુખલેભલા. ૧૨૧

૨૫૦ આત્મામહીં તું જા હવે અથડાવું મટી જાશે, ખરે !
જાવું હશે આત્મામહીં આધાર લે તેનો જ, રે ! ૧૨૨

૨૫૧ ચેતનરૂપી આકાશ રમ્યતા સદા જયવંત છે;
એ રમ્યતા, આકાશથી જુદો જ કો પ્રકાર છે. ૧૨૩

૨૫૨ આકાશમાં ચંદ્ર વળી તારાતણી છે રમ્યતા;
ચૈતન્યના આકાશમાં ગુણોતણી છે રમ્યતા. ૧૨૩

૨૫૩ પ્રત્યક્ષ સ્વસંવેદને જે જ્ઞાન તેની રમ્યતા–
જુદી જ છે, અનુપમ વળી, સ્વાનુભૂતિની રમ્યતા. ૧૨૩

૨૫૪ આત્માતણાં શુદ્ધ સ્વરૂપને અનુભવ સહિત બતાવતાં;
ગુરુદેવનાં વચનો બધાં છે રામબાણ સમા, અહા ! ૧૨૪

૨૫૫ એ વચનથી જે મોહ તે સત્વર ભાગી જાય છે;
શુદ્ધાત્મનાં તત્ત્વતણો પ્રકાશ પ્રાપ્ત થાય છે. ૧૨૪

૨૫૬ આત્મા વસે ન્યારો, ન વાણી, ન પુદ્ગલ દેશમાં;
ચેતન રહે ચૈતન્યમાં, તે તો સદા નિજ દેશમાં. ૧૨૫

૨૫૭ જ્ઞાન લક્ષણ આત્મનું ઓળખાવતાં ગુરુદેવ છે;
તે લક્ષણ વડે અંદર જઈ તું શોધ તારા આત્મને. ૧૨૫

૨૫૮ પર્યાય દૃષ્ટિ છોડીને દ્રવ્યપરે દૃષ્ટિ કરે;
માર્ગ મળે, જો લગન તો પુરુષાર્થ તેનો ઉપડશે. ૧૨૬

૨૫૯ કંટાળતો અંદરમહીં, ને થાક ખરો જો લાગશે;
ખરેખરનો જો થાક તો પાછો વળ્યાવિણ ના રહે. ૧૨૬

૨૬૦ ના કોઈ કોઈનું કરી શકે, વિભાવ પણ તુજ છે નહીં;
બાહ્ય સંયોગો અરે ! તુજ હોય કયાંથી રે ! પછી ! ૧૨૭

૨૬૧ છે જાણનારો આતમા, અટકે ન ધારા જ્ઞાનની;
હો રોગ કે ઉપસર્ગ હો પણ તે નહીં તેના મહીં. ૧૨૮

૨૬૨ ઉપસર્ગમાં ત્રણ પાંડવે થઈ લીન કેવળ પ્રગટ કર્યું;
પોતાથકી અટકે જ તે, ના કોઈ છે અટકાવતું. ૧૨૮

૨૬૩ ભગવાન આજ્ઞા બહાર તું પગ મૂકીશ તો ડૂબી જશે;
કર જ્ઞાન અનેકાંતનું તો સાધના સાર્થક થશે. ૧૨૯

૨૬૪ ચક્રવર્તી છે તુજ આતમા, રત્નો અનંતા ત્યાં ભર્યાં;
ગુણ ઋદ્ધિ છે જે પ્રગટતી પોતામહીં છે જે ભર્યાં. ૧૩૦

૨૬૫ આવીશ ના તું બહારમાં, શુદ્ધોપયોગે રહેજે સદા;
સંસારથી ઉગરવાતણો છે માર્ગ શુદ્ધોપયોગમાં. ૧૩૧

૨૬૬ શુદ્ધોપયોગે ના રહે પણ પ્રતીતિ સાચી રાખજે;
પ્રતીતિમાં જો ફરક તો સંસાર ઊભો જાણજે. ૧૩૧

૨૬૭ લીંડી પીપરના લઢણથી તીખાશ પૂરી પ્રગટશે;
સ્વભાવનું લઢણ થતાં અનંત ગુણો પ્રગટશે. ૧૩૨

૨૬૮ ચૈતન્ય શોભા નિરખવાં જ્ઞાની સદા આતુર છે.
તે પરમ પુરુષાર્થી અહો ! જ્ઞાની દશા કેવી હશે? ૧૩૩

૨૬૯ અંદર ગયા ન બહારમાં જે આવવા ઈચ્છે કદી.
તે દિવસને છે ધન્ય ના આવવું પડે બહારમાં. ૧૩૩

૨૭૦ વિભાવ સઘળા પર વિજય છે મેળવે મુનિરાજ એ;
સામ્રાજ્ય પ્રવજ્યા રૂપ તે ફરકે વિજય ધ્વજ ખરે ! ૧૩૪

૨૭૧ ના દોષ એક પછી એકને શોધી કરી તે ટાળતો;
અંદર નજર જ્યાં ઠેરવે ત્યાં દોષનો ભૂકો થતો. ૧૩૫

૨૭૨ આત્મા અનાદિ અનંત ગુણ રતનનો છે પીંડ એ;
અંદર નજર જ્યાં ઠેરવે ગુણરત્ન ત્યાંથી પ્રગટશે. ૧૩૫

૨૭૩ સમકિત પહેલાં પણ વિચારો થકી નિર્ણય થઈ શકે;
'આ આતમા' પાકો જ એવો નિર્ણય છે, કરી શકે. ૧૩૬

૨૭૪ અનુભૂતિ હજુ ના હોય તો પણ નિર્ણય તો ત્યાં હોય છે;
વિકલ્પ સહિતનો નિર્ણય પણ તોય પાકો હોય છે. ૧૩૬

૨૭૫ ચેતન પરિણતિ જીવન છે, અનંતવાર બહારમાં–
મળ્યું બહુ, ન અપૂર્વ તે પુરુષાર્થ કર તો અપૂર્વ છે. ૧૩૭

૨૭૬ માન્યું સર્વસ્વ બહારમાં, પલટાવીને તેને હવે;
સ્વમાં સર્વસ્વ માન તું પુરુષાર્થને પલટાવીને. ૧૩૭

૨૭૭ રુચિ રાખવી, વૃદ્ધિ કરો, છે કામ તેનાથી થશે;
'જ્ઞાયક' તણી રુચિ હોય તો પુરુષાર્થનું વલણ બને. ૧૩૮

૨૭૮ ગુરુદેવે તો આપ્યું ઘણું, સમજાવતાં બહુ રીતથી;
ગુરુદેવનાં વચનામૃતો વિચારવા પ્રયોગથી. ૧૩૮

૨૭૯ ઊંડાણમાં લગની વડે પુરુષાર્થથી વસ્તુ મળે;
ન અનાદિની લાગી લગન, ના જ્ઞાન આનંદ તેથી મળે. ૧૩૯

૨૮૦ 'છે,' 'છે' તણી અસ્તિ તને તો આવતી છે ખ્યાલમાં;
તું 'જાણનારો,' 'જાણનારો,' 'જાણનારો' છો સદા. ૧૪૦

૨૮૧ માત્ર 'સત્' ન વર્તમાને ત્રિકાળ 'સત્' તે જાણજે;
'વર્તમાન અસ્તિ' માનતો પણ તું અરે ! તેની અસ્તિને. ૧૪૦

૨૮૨ જે વર્તમાને હોય તે ત્રિકાળમાં પણ હોય છે;
ત્રિકાળને શ્રધ્યું નહીં, બાકી બધું તો બહુ કરે. ૧૪૦

૨૮૩ અજ્ઞાનીને અનાદિનો વિભાવનો અભ્યાસ છે;
મુનિરાજને સ્વભાવનો અભ્યાસ વર્તે છે સદા. ૧૪૧

૨૮૪ પોતે સહજ પોતાતણી પ્રાપ્ત કરી છે આ દશા;
ઉપયોગ જ્યાં બાહ્ય વળે ત્યાં સહજ સમાધિ સાધતા. ૧૪૧

૨૮૫ મુનિરાજને બહારમાં બોજો—ઉપાધિ લાગતા;
મુનિરાજ તો અંદરમહીં સહજ સમાધિ સાધતા. ૧૪૧

૨૮૬ તું આતમાને ઓળખી ઊર્ધ્વ સદા તું રાખજે;
જો હોય જિજ્ઞાસા ખરી પ્રયાસ જરૂર તો ત્યાં થશે. ૧૪૨

૨૮૭ સ્વરૂપમાં તન્મય થતાં વિકલ્પ જાળેથી ખસે;
આતમ સન્મુખ થાય છે, ગુણો બધા વિકસિત થાય છે. ૧૪૩

૨૮૮ સાચું સમજતાં વાર પણ આનંદ—મુક્તિ ફળ મળે;
આત્મામહીં એકાગ્રતા ત્યાં આનંદનાં ઝરણાં ઝરે. ૧૪૪

૨૮૯ જો રાગનું જીવતર તને આત્મામહીં નહીં જઈ શકે;
જો રાગને તું માર તો અંદર જરૂર જઈ શકે. ૧૪૫

૨૯૦ દ્રવ્ય ન કોઈ નિજતણાં સ્વરૂપને છોડી શકે;
આત્મા પરમ શુદ્ધ સદા ના ભાવ ક્ષાયોપશમિક પણે. ૧૪૬

૨૯૧ સ્વભાવને ઓળખ અહા ! ગુણ રત્નમાળા ત્યાં પડી;
ત્રિકાળ લક્ષણ જાણીને પ્રતીત કર તેની ખરી. ૧૪૬

૨૯૨ આત્માતણું જે જ્ઞાન તેમાં સમાય છે જ્ઞાન બધું;
જાણે એક તો જાણે બધું, જાણે ન મૂળ, નિષ્ફળ બધું. ૧૪૭

૨૯૩ ચૈતન્ય લોકે જા અહા ! અનંતગુણો જ્યાં ભર્યા;
નિર્વિકલ્પ તું થઈ જા અહા ! શોભા ખરી નિહાળવા. ૧૪૮

૨૯૪ 'રાગી છું કે હું નથી' વિકલ્પથી પાર શુદ્ધ તત્ત્વ છું;
અતિક્રાંતિને નય ચક્રને ચૈતન્ય છે બિરાજતું. ૧૪૯

૨૯૫ દૃષ્ટિ ખરી પ્રગટ કરી શુદ્ધ તત્ત્વની, ને તેહની—
નૌકામહીં બેસી ગયો તે તો ખરે જાશે તરી. ૧૫૦

૨૯૬ એકદમ પુરુષાર્થથી સ્વભાવમાં ઊંડો જજે;
રોકાઈશ ના, ખટક અંદરથી જતાં પ્રગટશે વીતરાગતા. ૧૫૧

૨૯૭ બાહુબલી વિકલ્પમાં અટક્યા, નહીં વીતરાગતા;
ન કણું સમાય જ્યમ આંખમાં, અણુમાત્ર વિભાવ સમાય ના.

૨૯૮ સંજ્વલન કષાયનો અતિ સૂક્ષ્મ અંશ વિદ્યમાન છે;
ત્યાં સુધી પૂર્ણજ્ઞાન—કેવળજ્ઞાન ના પ્રગટ થશે. ૧૫૧

૨૯૯ આત્માતણી ઓળખ કરી સ્વરૂપની જો રમણતા;
પ્રાપ્ત કરે તો તેહને પ્રાયશ્ચિત છે સાચું, અહા ! ૧૫૨

૩૦૦ રાજાતણાં દરબારમાં જવું હોય ટહેલ કરે પછી;
દરબારમાં એક વાર તો અંદર ઘૂસી તે જાય છે. ૧૫૩

૩૦૧ સ્વરૂપ માટે દેવગુરુની સમીપતા રાખે અને
અંદર જવા શીખે તુરત નિજ ઘર અહો !જોઈ જ લે. ૧૫૩

૩૦૨ જેને રુચિ જેની હશે તેને જ તે ગમતું સદા;
બીજું ડખલરૂપ લાગશે, રુચિ કરે આ સમજવા. ૧૫૪

૩૦૩ ‘કાલે કરું, કાલે કરું’ એ વાયદા કરશો નહીં;
ગડમથલ અંદરમાં રહે હમણાં જ કરવું છે હવે. ૧૫૪

૩૦૪ જો ભેદજ્ઞાન વિશેષતા કરી હોય તો તેને પછી—
આવે પરિષહ કોઈ પણ વિશેષ રહે આત્મા પછી. ૧૫૫

૩૦૫ કરવાનું છે એક જ સદા એકત્વ તોડો પરથકી;
‘તન્મયતા પર દ્રવ્યની તોડો’ કરો એક જ સદા. ૧૫૬

૩૦૬ અભ્યાસ છે અનાદિનો પર સાથ એકાકારનો;
ગુરુદેવ તો ખુલ્લમખુલ્લા છે માર્ગને બતલાવતા. ૧૫૬

૩૦૭ પોતે કરી પુરુષાર્થને, પરથી જુદો જે આતમા—
અનંત ગુણ ભરેલ છે ત્યાંથી ગુણો પ્રગટાવશે. ૧૫૬

૩૦૮ મોટાની આજ્ઞા માનવી, ડરવું, સદા, એ તો તને—
તુજ અવગુણે ડરવા સમું, રાગાદિ અવગુણો દબાય છે.૧૫૭

૩૦૯ મોટા વિના રાગાદિના વેગોમહીં તણાઈ જશે;
ને તેથી તું અવગુણ તારા પણ નહિ જાણી શકે. ૧૫૭

૩૧૦ મોટા શરણથી દોષનું સ્પષ્ટીકરણ તુજ થાય છે;
પ્રગટ થશે ગુણો અને ગુણનિધિ પણ ઓળખાય છે. ૧૫૭

૩૧૧ અંદરમહીં સુખ છે અને તું બહારમાં ફાંફા કરે;
જયમ ઝાંઝવામાં જળ નહીં, ન બહારમાં સુખ છે મળે. ૧૫૮

૩૧૨ ગુરુ તને ગુણો ખિલવવાની કળા દેખાડશે;
આજ્ઞામહીં ગુરુરાજની રહેવું પરમ એ સુખ છે. ૧૫૯

૩૧૩ કર્મજનિત વિભાવમાં છે જીવ તો દબાઈ રે !
આજ્ઞામહીં રહેતા કરમ દબાય, ગુણો પ્રગટશે. ૧૫૯

૩૧૪ કાદવ થકી જુદું કમળ, તુજ દ્રવ્ય જુદું કરમથી;
ના ભૂત—વર્તમાનમાં કે ભાવિમાં તે એક કદી. ૧૬૦

૩૧૫ તુજ ગુણ ના પરમાં ભળે, શુદ્ધ દ્રવ્યને ઓળખ હવે;
અસ્તિત્વની ઓળખ થતાં જુદાપણું જ જણાય છે. ૧૬૦

૩૧૬ સંસારથી ભયભીતને આત્માર્થનો ઉપદેશ છે;
ગુરુરાજ આશય પામવા શિષ્ય સદા યત્ન કરે. ૧૬૧

૩૧૭ શંકા નહીં, સત્ય જ છે, ગુરુવાતમાં સંદેહ ના;
સમજી હું ન શકતો અરે !સમજણતણો મુજ દોષ ત્યાં. ૧૬૧

૩૧૮ દ્રવ્ય સદા નિર્લેપ છે, જાણનાર જુદો જ છે;
તરતો અને તરતો જ છે, તે તો સદા નિર્લેપ છે. ૧૬૨

૩૧૯ સ્ફટિકમાં પ્રતિબિંબ પણ સ્ફટિક સદા નિર્મળ છે;
જીવમાં વિભાવ જણાય પણ જીવ તો સદા નિર્લેપ છે. ૧૬૨

૩૨૦ જ્ઞાયકપણે જો પરિણમે પર્યાયમાં નિર્લેપતા;
વિભાવ જે જણાય તેનો જ્ઞેય, જ્ઞાયક હું સદા. ૧૬૨

૩૨૧ ચેતન સ્વરૂપી, ગુણવંત, ચમત્કૃત પદાર્થ છું;
જ્ઞાનાદિ અનંતા ગુણનો ના મેળ અન્ય દ્રવ્ય થકી. ૧૬૩

૩૨૨ નિર્મળ રૂપે જ્યાં પરિણમે, ખીલે કમળ જયમ પાંખડી;
તો આતમા પણ ગુણરૂપી પાંખડીમહીં ખીલી ઉઠે. ૧૬૩

૩૨૩ પૂર્ણ નિરોગી આતમા પર્યાયમાં રોગો બધાં;
ચેતન તણી જે ભાવના ઓસડ ખરું તે રોગમાં. ૧૬૪

૩૨૪ એ ભાવના પરિણમન છે શુદ્ધ, નહિ શુભ વા અશુભમાં;
તેના થકી જરૂર તુજ સંસાર રોગ ટળી જતા. ૧૬૪

૩૨૫ વચનામૃતોને સમજીને એ ભાવનારૂપ ઓસડ વડે;
ભાવ રોગને ટાળી શકે તો વચન નિમિત્ત કહેવાય છે. ૧૬૪

૩૨૬ જેને નથી મહિમા અરે ! ચૈતન્ય દેવ તણો જરી;
અંદરમહીં વસવાટ કરવો દુર્લભ છે તેને પછી. ૧૬૫

૩૨૭ મુક્ત સ્વરૂપી આત્મા ! ઓળખેથી પાંચ પ્રકારના–
પરાવર્તને છુટાય છે તેથી જ મુક્તિ થાય છે. ૧૬૬

૩૨૮ તારા તરફ દૃષ્ટિ કરે જો એકધારી ને પછી;
તારા શરણ જે આવશે જન્મ મરણ જાશે ટળી. ૧૬૬

૩૨૯ વાણી અને વિભાવથી જુદું છતાં ગુરુ વચનથી–
જાણી શકે એ તત્ત્વની અચિંત્યતા ગુરુ બતાવતા. ૧૬૭

૩૩૦ અગાધ છે તે તત્ત્વ ને અપૂર્વ વળી તે તત્ત્વ છે;
શુભ–અશુભથી દૂરે બહુ ચેતનતત્ત્વ પોતેજ છે. ૧૬૭

૩૩૧ ગુરુ વચનથી એ રીત જે છે જ્ઞાન ભેદતણું કરે;
શુદ્ધ દૃષ્ટિવાળો થાય તેને યથાર્થ દૃષ્ટિ થાય છે. ૧૬૭

૩૩૨ અંશો વધારી લીનતાના મુનિ વધુ લીન થાય છે;
કેવળ કરે પ્રગટ પછી પરિપૂર્ણ મુક્ત થાય છે. ૧૬૭

૩૩૩ સમકિતમાં જીવ ચેતનતણાં મહેલનો માલિક થઈ ગયો;
અસ્થિરતા કચરો બધો તે કાઢીને કેવળી થશે. ૧૬૮

૩૩૪ તીવ્ર જો પુરુષાર્થ તો ઓછો સમય ત્યાં લાગશે;
ને મંદ જો પુરુષાર્થ તો વધુ સમય તેને લાગશે.૧૬૮

૩૩૫ વિભાવ—પરાવર્તનમહીં ના કયાંય વિશ્રાંતિ ખરે;
ચૈતન્યગૃહ સાચુકલું વિશ્રાંતિગૃહ તું માનજે. ૧૬૯

૩૩૬ મુનિરાજ નિર્વિકલ્પમાં પ્રવેશીને વિશ્રામ કરે;
આવ્યા ન આવ્યા બહાર ત્યાં અંદર ચાલ્યાં જાય છે. ૧૬૯

૩૩૭ તું એક ચેતન ગ્રહણ કર વિભાવથી મુક્ત બની;
પરમાત્મને તું ગ્રહણ કર, થા લીન આસક્તિ તજી. ૧૭૦

૩૩૮ તલવાર બે ન રહી શકે જ્યાં મ્યાન એક જ હોય છે;
ચેતન અને સંસારનો મહિમા ન સાથે રહી શકે. ૧૭૧

૩૩૯ ક્ષણિક કરે વૈરાગ્ય કો – 'અશરણ આ સંસાર છે;'
'અનિત્ય છે' તેને કદી ચૈતન્ય સમીપતા ના થાય છે. ૧૭૧

૩૪૦ ચૈતન્યના મહિમા સહિત વિભાવ મહિમા જો છૂટે;
સંસારનો મહિમા છૂટે તે જીવ ચેતન સમીપ છે. ૧૭૧

૩૪૧ ચૈતન્ય જે તુજ ચીજ છે અપૂર્વ, મહિમાવંત તે;
તેની સહી ઓળખ કરી મહિમા તું કર તેનો હવે. ૧૭૧

૩૪૨ પામી મહેલ રાજાતણો પાછો ફરે, ખેદીત બને;
સુખધામ આતમ પામીને બાહ્ય જતાં ખેદીત બને. ૧૭૨

૩૪૩ શાંતિ અને આનંદનું જે સ્થાન તે આત્મા જ છે;
ના દુઃખ, ત્યાં ન મલિનતા—જ્ઞાની સદા દૃષ્ટિ ધરે. ૧૭૨

૩૪૪ ન સમાય કણ જ્યમ આંખમાં ત્યમ અંશ પણ વિભાવનો—
જો હોય તો, સ્વભાવની ના પૂર્ણતા પ્રાપ્ત થશે. ૧૭૩

૩૪૫ જ્યાં સુધી અલ્પ પ્રમાણમાં સંજ્વલન પણ કષાય છે;
ત્યાં સુધી નહીં વીતરાગતા, કેવળ નહીં તો થાય છે. ૧૭૩

૩૪૬ જેને નથી ઘર મળી શકયું તે તો રહે છે બહારમાં;
તે બહાર ચીજ ધમાલમાં ના શાંત રહી શકશે કદા. ૧૭૪

૩૪૭ પણ ઘર મળી જો જાય તો ઘરમાં રહી તે બહારમાં—
ચીજો—ધમાલ નિરખીને શાંત જ રહેશે એ સદા. ૧૭૪

૩૪૮ ચૈતન્ય ઘર પ્રાપ્ત થયું દૃષ્ટિ મળી ગઈ જેહને;
ઉપયોગ જાય બહારમાં તો પણ સદા શાંતિ રહે. ૧૭૪

૩૪૯ નંદનવને વૃક્ષ અનેક, જયમ વિવિધ પ્રકારના–
પત્રો અને પુષ્પો ખીલે બહુવિધ ફળાદી ખીલતાં. ૧૭૫

૩૫૦ તે રીત સાધક આત્મના ચેતનરૂપી નંદનવને–
ગુણો અનેકે છે ખીલે પર્યાય વિવિધ પ્રકારની. ૧૭૫

૩૫૧ મુક્ત દશા પરમાનંદનું મંદિર છે ત્યાં વાસ જો;
તો મુક્ત તે આત્મામહીં અનંત આનંદ પરિણમે.૧૭૬

૩૫૨ આ મોક્ષરૂપ મંદિરનું તો દ્વાર સામ્યભાવ છે;
જ્ઞાયકપણે પરિણમનથી સ્થિરતા થતાં તે પ્રગટશે.૧૭૬

૩૫૩ સ્વાનુભૂતિ નંદનવને આનંદમય જે વિહરતો;
ન બહારમાં કયાંયે પછી તેને ખરે રસ લાગતો.૧૭૭

૩૫૪ ના ધ્યાન સાચું, પ્રથમ તો જ્ઞાન સાચું હોય છે;
આ શરીર તે સ્પર્શાદિથી જુદો પ્રથમ જણાય છે. ૧૭૮

૩૫૫ વિભાવ ને શુભભાવ ઊંચો થાય તે તો હું નથી;
એ રીત હું સૌથી જુદો જ્ઞાયક, નહીં સૌ મુજ મહીં. ૧૭૮

૩૫૬ રે ! ધ્યાન તો સાધકતણું કર્તવ્ય છે, પણ તે નહીં–
જો થાય તો શ્રદ્ધા બરોબર રાખજે તું તો ખરી. ૧૭૯

૩૫૭ તારા મહીં શક્તિ અગાધ પડી છે, જો જરી;
તેનું અહો ! શ્રદ્ધાન તો અવશ્ય તું કરજે સહી. ૧૭૯

૩૫૮ ઉપયોગ જાય અંદર મહીં નય પક્ષ છૂટી જાય છે;
આત્મા ખરે જેવો જ છે તેવો જ અનુભવ થાય છે. ૧૮૦

૩૫૯ ગુફામહીં જવું હોય તો વાહન દ્વારે અટકાવીને–
અંદર પછી તે એકલો ચાલીને પહોંચી જાય છે. ૧૮૦

૩૬૦ ચેતનગુફામાં જીવ પણ એકલો જ અંદર જાય છે;
ત્યાં ભેદભાવો રહે નહીં સઘળાય છૂટી જાય છે. ૧૮૦

૩૬૧ ‘આ જ્ઞાન છે, દર્શન, વિભાવ ને આ કર્મ છે;
આ નય અને ચૈતન્ય આ’—એવું બધું આવે ભલે— ૧૮૦

૩૬૨ અંદર જતાં પણ ત્યાં બધું તુરત જ છૂટી જાય છે;
ના એક એક વિકલ્પને તો છોડવો પડતો, ખરે. ૧૮૦

૩૬૩ ‘આ ધ્યાન છે’ ‘આ ધ્યેય છે’ એવા વિકલ્પો હોય ના;
નિર્વિકલ્પતા જ્યાં થાય ત્યાં વિકલ્પ તૂટી જાય છે. ૧૮૧

૩૬૪ જ્ઞાનીતણી દૃષ્ટિ સદા પરમાતમા પર હોય છે;
ને ધ્યાન, ધ્યાતા, ધ્યેયતણાં વિકલ્પ તો પણ હોય છે. ૧૮૧

૩૬૫ સ્વાનુભૂતિના કાળમાં વિકલ્પ છૂટી જાય છે;
શુભ—અશુભ ના, નિર્વિકલ્પતા ઉગ્રતા મુક્તિ લહે. ૧૮૧

૩૬૬ ‘છોડુ હું વિકલ્પને’ કહે, ના એમ તે છૂટતા કદી;
જે ભેદજ્ઞાને પરિણમે તેના બળ થકી તે છૂટશે. ૧૮૨

૩૬૭ રમણીય છે ચેતન સદા, રમણીયતા ન બહારમાં;
શાશ્વત જીવ રમણીય છે, ઓળખ અને લે ગ્રહણમાં. ૧૮૩

૩૬૮ આડંબર ક્રિયાકાંડનો, કોલાહલ વિવિધ વિકલ્પનો—
દૃષ્ટિ હટાવી, દૃષ્ટિ કર, આડંબર રહિત વિકલ્પનો. ૧૮૩

૩૬૯ ચેતન રમણતા વિણ તું કોલાહલમહીં થાકી જશે;
વિશ્રામગૃહ તુજ આતમા ત્યાં જા તને શાંતિ થશે. ૧૮૩

૩૭૦ ચેતન તરફ પ્રયત્નથી જ્ઞાનાદિ વૃદ્ધિ થાય છે;
અંતરમહીં અવશ્ય કો' ને વ્રતાદિ પ્રગટ થાય છે. ૧૮૪

૩૭૧ બાહ્ય ક્રિયાકાંડ સૌ પરમાર્થથી કોલાહલ ખરે !
શુભભાવ શાંતિ માર્ગ નહિ, સ્થિર થઈ અંદર જા હવે. ૧૮૪

૩૭૨ મુનિરાજ તો એમ જ કહે— ‘ચેતન પૂરણ પદાર્થ છે;
અંદર જઈને સંપદાની પ્રાપ્તિ એ અમ વિષય છે’ ૧૮૫

૩૭૩ ‘ચેતનમહીં સ્થિરતા કરી પ્રાપ્તિ અપૂર્વ ના કરી;
જો ના સમાધિ પણ થઈ તો અમ વિષયની પ્રાપ્તિ નહીં’ ૧૮૫

૩૭૪ ‘ઉપયોગ જો બાહ્ય ગયો દ્રવ્યાદિના વિચારમાં;
રોકાઈ તો જાવું પડે પણ તે અમારો વિષય ના.’ ૧૮૫

૩૭૫ ‘આત્મામહીં નાવિન્ય ને અપૂર્વતા ભંડાર છે;
મુનિપણે જો પ્રગટ ના તો વ્યર્થ અમ અવતાર છે.’ ૧૮૫

૩૭૬ વૈરાગ હોય ગૃહસ્થિને, મુનિરાજનો જુદો જ છે;
મુનિરાજ વૈરાગ્ય મહેલ શિખર શિખામણિ જ છે. ૧૮૬

૩૭૭ અભ્યાસ પરાયણ રહે વારંવાર અંદર જાય છે;
ઓળંગી મર્યાદા બહારમાં જો જાય તો મુનિ ના રહે ૧૮૭

૩૭૮ ન બની શકે તે કાર્યની બુદ્ધિ થવી છે મૂર્ખતા;
જે બની શકે કરતો નથી ન બની શકે કરવા ચહે. ૧૮૮

૩૭૯ મુનિરાજને કર્તૃત્વની બુદ્ધિ ખરે છૂટી ગઈ;
આહાર—વિહારાદિના વિકલ્પ પણ મંદ થઈ ગયા. ૧૮૮

૩૮૦ મુનિરાજને ઉપદેશનો વિકલ્પ તો આવે ભલે;
વિકલ્પની પણ જાળ તો ના ચાલતી રહેતી સદા. ૧૮૮

૩૮૧ દૃષ્ટિતણો તુજ દોર તું ચૈતન્ય ઉપર જ બાંધજે;
ઉપયોગ જો બાહ્ય રહે પણ દૃષ્ટિને તું બાંધજે. ૧૮૯

૩૮૨ આકાશમાં ઊડે પતંગ પણ દોર રહે છે હાથમાં;
દૃષ્ટિતણા પણ દોરને ચેતનમહીં તું બાંધ, હા ! ૧૮૯

૩૮૩ જે પરમ પારિણામિક ભાવ છે તેને જ તું અવલંબજે;
પરિપૂર્ણનો આશ્રય કર તો તું પૂર્ણતાને પામશે. ૧૮૯

૩૮૪ ગુરુવાણી તો નિમિત્ત છે પણ સમજીને આશ્રય તો—
પોતે જ કરવાનો રહે પરિપૂર્ણ તુજ આશ્રય ખરો. ૧૮૯

૩૮૫ મેં તો અનાદિ કાળથી છે બહારમાં ગ્રહણ કર્યું;
તેનું જ છે ધ્યાન કર્યું ને તેનું જ છે જ્ઞાન કર્યું. ૧૯૦

૩૮૬ મુનિપણું પણ બહારથી માની લીધું, ઘણું મેં કર્યું;
શુભભાવ તો બહુ બહુ કર્યા પણ દૃષ્ટિ પર્યાયે રહી. ૧૯૦

૩૮૭ શક્તિ અગાધ ચૈતન્યની પહિચાન, ગ્રહણ નહીં;
સામાન્યનું ગ્રહણ નહીં, વિશેષનું ગ્રહણ સદા. ૧૯૦

૩૮૮ દૃષ્ટિતણા એ દોરને તું હાથ પકડી રાખજે;
સામાન્યને ગ્રહજે સદા, છો અનેકનું જ્ઞાન કરે. ૧૯૧

૩૮૯ અંદર લગન વધતી જશે સાધક દશા વધતી જશે;
સામાન્ય અવલંબન વડે વ્રતો મહા પણ આવશે. ૧૯૧

૩૯૦ આત્મા નિવૃત્ત સ્વરૂપ છે શાંત સ્વરૂપી છે સદા;
મુનિને બહાર ત્યાંથી આવવું પ્રવૃત્તિ રૂપ લાગે સદા. ૧૯૨

૩૯૧ શુભભાવ હો ઊંચા ઘણાં બોજારૂપ તે પણ લાગતા;
જાણે અરે ! પર્વત મહા ઉપાડવાનો હોય ના. ૧૯૨

૩૯૨ શાશ્વત છે આત્માતણી જ્યાં ધૂન ઊગ્ર લાગી ગઈ;
પ્રચુર સંવેદન મહીંથી ઈચ્છા નહીં છે બહારની. ૧૯૨

૩૯૨ સમ્યગ્દૃષ્ટિવંત તો જ્ઞાયકને સદા જ્ઞાયક વડે–
(A) ધારે, ટકાવી રાખતો, સ્થિર રાખતો તે સહજમાં. ૧૯૩

૩૯૩ સુદૃષ્ટિને–મુનિરાજને ભેદજ્ઞાન તો ચાલુ જ છે;
નિજ સ્થિતિના પ્રમાણમાં અંદર–બહાર તે જાય છે. ૧૯૩

૩૯૪ મુનિરાજનો ઉપયોગ અંદર ઝડપથી જાય છે;
જ્ઞાતાતણી ધારા રહે ચાલુ જ બન્નેને સદા. ૧૯૩

૩૯૫ પુરુષાર્થવિણ ના કાળ કો, ગુણ સ્થાન અનુસારે રહે;
પુરુષાર્થવિણ પરિણતિ નહીં, તે સહજ ને પુરુષાર્થ પણ. ૧૯૩

૩૯૬ ગુરુદેવશ્રી મોક્ષતણો શાશ્વત માર્ગ બતાવતા;
અંદરમહીં જે માર્ગ છે તે માર્ગ પર તું જા ભલા ! ૧૯૪

૩૯૭ ઊર્ધ્વ ગણો સૌ આત્મને પ્રમુખતા પણ આત્મની;
જિજ્ઞાસુની ભૂમિકામહીં પણ અધિકતા તો આત્મની. ૧૯૫

૩૯૮ સ્વરૂપ તો સહજ જ ખરે, તેને સુગમ તુ જાણજે;
અનભ્યાસથી દુર્ગમ દીસે પણ તે નહીં દુષ્કર ખરે. ૧૯૬

૩૯૯ કો અન્યના સંગે ચડે, સંગ છોડવો દુષ્કર બને;
દુષ્કર નહીં, પણ ટેવથી દુષ્કર ખરે કલ્પાય છે. ૧૯૬

૪૦૦ પર સંગને છોડી દઈ છૂટો રહે દુષ્કર નહીં;
સ્વભાવને તે રીત પામે છે સહજ, દુષ્કર નહીં. ૧૯૬

૪૦૧ પ્રજ્ઞાછીણી શુભ–અશુભને જ્ઞાનની સંધીમહીં–
ઉપયોગને સૂક્ષ્મ કરી થઈ સાવધાને પટકવી. ૧૯૭

૪૦૨ થઈ સાવધાને એટલે ઉપયોગને સૂક્ષ્મ કરી;
ને ઓળખી લક્ષણ વડે અંતર સંધીમાં તે પટકવી. ૧૯૭

૪૦૩ અબરખતણાં પડ પાતળાં તે સાવધાને જુદાં પડે;
ઉપયોગ કરી સૂક્ષ્મ બહુ વિભાવને તું તોડજે. ૧૯૭

૪૦૪ વિભાવભાવના સમયમાં સ્વભાવને જુદો ગણી;
જુદો જ છે ના ભાસતો તેને હવે લે ઓળખી. ૧૯૭

૪૦૫ વિભાવ ને જ્ઞાયક સદા જુદાં ખરે જુદાં જ છે,
પાષાણ, સોનું એક જે દેખાય પણ જુદાં જ છે. ૧૯૭

૪૦૬ પ્રશ્ન :—સોનું ચળકતું હોય છે તેથી જુદું જ જણાય છે;
સ્વભાવ તો ચળકે નહીં જુદો ગણો કઈ રીત તે? ૧૯૭

૪૦૭ ઉત્તર :—આ જ્ઞાન તો ચળકે બહુ વિભાવ ના ચળકે કદી;
ચળકાટ જે પ્રસરી રહ્યો જ જણાય છે, સોનું નહીં. ૧૯૭

૪૦૮ સાચાં અને ખોટાં વળી જો મોતી ભેગા હોય તો;
જે પારખું તે મોતી સાચાંને જુદાં લે ઓળખી. ૧૯૭

૪૦૯ પ્રજ્ઞાથી ગ્રહવો આતમા–'જે જાણનારો તેજ હું'
'જે દેખાડનારો તેજ હું'–એ રીત જુદાં પાડ તું. ૧૯૭

૪૧૦ પ્રજ્ઞા થકી જુદા પડે, સાધન પ્રજ્ઞા થઈ શકે;
વ્રત, તપ, ત્યાગાદિ કદી સાધન નહીં જ બની શકે. ૧૯૭

૪૧૧ સ્વભાવની મહિમા થકી સુખ બુદ્ધિ પરમાં ના રહે;
સ્વભાવમાં રસ લાગતો બીજું નીરસ છે લાગશે. ૧૯૭

૪૧૨ ના એમ તો બનતું કદી કે રુચિ પરમાં હોય ને–
ઉપયોગ અંતરમાં પ્રજ્ઞાછીણીનું કાર્ય કરે. ૧૯૭

૪૧૩ જ્ઞાતાપણાં અભ્યાસથી જ્ઞાતાપણું પ્રગટ થતાં–
કર્તાપણું છૂટી જશે, વિભાવ એક ન થઈ જશે. ૧૯૮

૪૧૪ વિભાવ ના સ્વભાવ છે, ના એકમેક થઈ શકે;
દ્રવ્ય સદા શુદ્ધ રહે, ન વિભાવમાં તે ભળી શકે. ૧૯૮

૪૧૫ પરને કરું, રાગાદિ મુજ, વિભાવને હું કરી શકુ;
ભ્રમણા રહી અનાદીની જ્ઞાતા થતા જાશે છૂટી. ૧૯૮

૪૧૬ જીવને અટકવા બહુ પ્રકારો ત્યાંથી તું પાછો વળી–
ચેતનમહીં ઉપયોગને તું લગાડજે, પ્રાપ્તિ નક્કી. ૧૯૯

૪૧૭ એ રીતના પુરુષાર્થને જીવો અનંતાએ કર્યો;
કાળ અનંતથી કરતા રહ્યાં એમ જ તું પણ કર હવે. ૧૯૯

૪૧૮ જીવ ક્યાંક ક્યાંક અટકતો તેના અનેક પ્રકાર છે;
ને સફળતા એક જ રીતે ચેતનમહીં જાવું ઘટે. ૧૯૯

૪૧૯ દ્રવ્યલિંગી સાધુ થઈ સૂક્ષ્મપણે તે અટકતો;
શુભભાવની મીઠાશમાં રોકાઈ તે જીવ જતો. ૧૯૯

૪૨૦ ‘આ રાગની છે મંદતા, મૂળગુણ અઠયાવીસ મુજ; ’
‘આ હું જ છું, આ માર્ગ છે’ સંતોષથી અટકી જતો. ૧૯૯

૪૨૧ અંદરમહીં વિકલ્પમાં છે એકતા બુદ્ધિ પડી;
તેને નથી જોતો અરે ! શાંતિ નહી વેદાય કાં ? ૧૯૯

૪૨૨ તે પાપ ભાવો ત્યાગીને સર્વ કર્યું છે–માનતો;
ને એમ તે મીઠાશમાં ખાલી સંતોષાઈ જતો. ૧૯૯

૪૨૩ સમકિતદૃષ્ટિવંતને ‘બાકી ઘણું, બાકી ઘણું’;
છે ભાવના એવી રહે પુરુષાર્થ પણ ટકતો સદા. ૧૯૯

૪૨૪ સમકિતીએ મૂળ પકડીને દૃષ્ટિ અપેક્ષા કર્યું બધુ;
અસ્થિરતારૂપ ડાળખાંને પાન સૂકાઈ જશે. ૧૯૯

૪૨૫ દ્રવ્યલીંગી છે જે સાધુ તેણે મૂળ પણ પકડયું નથી;
દૃષ્ટિ અપેક્ષાએ જ તેથી કંઈપણ કર્યું નથી. ૧૯૯

૪૨૬ સુદૃષ્ટિને બાકી ઘણું, દ્રવ્યલિંગી એ કર્યું બધું;
બાહ્ય દૃષ્ટિ માનતો પણ એમ તો હોતું નથી. ૧૯૯

૪૨૭ પરિષહ સહન કરતો રહે કર્તૃત્વ બુદ્ધિ ના ગઈ;
આકુળતા વેદાય છે તેણે કશું જ કર્યું નથી. ૧૯૯

૪૨૮ શુદ્ધાત્મની જે અનુભૂતિ છે તે જ જિનશાસન તણી;
શુદ્ધાત્મની પણ તેજ છે બ્રહ્માંડ ભાવો એ જ છે. ૨૦૦

૪૨૯ તેણે જ મારગ, જ્ઞાન ને, છે મોક્ષ બધું જાણી લીધું;
'સર્વ ગુણાંશ તે સમકિત છે' લોક–અલોક સહુ જાણી લીધું. ૨૦૦

૪૩૦ જે મારગે સમકિત થયું તે મારગે કેવળ થશે;
એ મારગે દેશવિરતિ ને મુનિપણું ચારિત્ર છે. ૨૦૦

૪૩૧ ચંદ્ર કળા જે બીજની આખો જ ખ્યાલે આવતો;
નમૂના મહીં પણ જેમ પૂરો માલ ખ્યાલે આવતો. ૨૦૦

૪૩૨ ગોળની કણી એકમાં આખો રવો જ જણાય છે;
ત્યાં તો જુદાં દ્રવ્યો બધાં પણ આતમા એક જ ખરે ! ૨૦૦

૪૩૩ સમકિતમાં બ્રહ્માંડનાં ભાવો બધાં આવી ગયા;
જે રીત અંશ પ્રગટીયો તે રીત તે પૂરણ થશે. ૨૦૦

૪૩૪ અપરિણામીનો આશ્રય કરો જ્યાં એમ છે કહેવાયું જે;
જ્ઞાયક પૂરાના આશ્રયે રહેવાનું ત્યાં કહેવાયું છે. ૨૦૧

૪૩૫ નિશ્ચયનયના વિષયરૂપ અખંડ જ્ઞાયક જે કહ્યો–
છે શાસ્ત્રમાં, તે જાણજે 'અપરિણામી' તું નિજાત્મને. ૨૦૧

૪૩૬ પ્રમાણથી જોતા–નહીં તું માત્ર છે 'અપરિણામી' રે !
'અપરિણામી' તું હોવા છતાં 'પરિણામી' પણ તું જાણજે. ૨૦૧

૪૩૭ 'અપરિણામી' પર દૃષ્ટિ થતાં પરિણામ ગૌણ બની જશે;
પરિણામ ના ચાલ્યા જશે, પરિણામી કયાં રે ! જઈ શકે. ૨૦૧

૪૩૮ ‘પરિણમન’ તો પર્યાય સ્વભાવ જ હોવા થકી—
થાશે સદા, સિદ્ધ દશામાં પણ હોય તો છે પરિણતિ. ૨૦૧

૪૩૯ જ્ઞાયક પર દૃષ્ટિ થઈ સમ્યગ્દૃષ્ટિ તો થઈ;
‘મુજ જ્ઞાનની પર્યાય આ’ ના એમ ત્યાં રોકા જરી. ૨૦૧

૪૪૦ ‘મુજ દ્રવ્યની પર્યાય આ’ તું એમ ત્યાં રોકાશ ના;
નિષ્ક્રિય જે તુજ તત્ત્વ ત્યાં તળ ઉપર દૃષ્ટિ સ્થાપ ભલા! ૨૦૧

૪૪૧ પરિણામ તો થાશે સદા ‘ગુણ—પર્યાય આ મુજ થઈ રહ્યાં—
આ મુજ તણાં પરિણામ છે’ ના એમ દે તું જોર ત્યાં. ૨૦૧

૪૪૨ પર્યાયમાં દ્રવ્યતણું સામર્થ્ય પૂરું આવે નહીં;
પરિપૂર્ણ તુજ સામર્થ્યને અવલંબ રે તું ભલા ! ૨૦૧

૪૪૩ તરંગોને તું જો નહીં દળ ઉપર દૃષ્ટિ સ્થાપ તું;
તરંગ તો ઉછળ્યા કરે, અવલંબન ન ત્યાં રાખ તું. ૨૦૧

૪૪૪ ગુણભેદ દૃષ્ટિ છોડીને અપરિણામીની દૃષ્ટિ કરી—
નિત્ય અભેદનું જોર થતાં જ્ઞાતાદૃષ્ટા જાશે બની. ૨૦૧

૪૪૫ પ્રતીતિ કરી દૃઢ, સૂક્ષ્મ ઉપયોગવાળો થઈ પછી;
ઊંડો તું ઊતરી જા હવે દ્રવ્યતણાં પાતાળમહીં. ૨૦૨

૪૪૬ આનંદ મળશે ત્યાં તને શાંતિ મળે છે ત્યાં સદા;
તું ખૂબ ધીરો થઈ જશે, તળિયું મળે તો દ્રવ્યમાં. ૨૦૨

૪૪૭ ઉપયોગ જે સ્થૂળ થઈ રહ્યો તેને બધેથી ઉઠાવીને—
તું ખૂબ ધીરો થઈ પછી તુજ દ્રવ્યને પકડ હવે. ૨૦૩

૪૪૮ રસ નહિ, વર્ણ નહિ, ગંધ ન, દ્રવ્યેન્દ્રિય પણ નહિ;
તુજ દ્રવ્યનાં સ્વરૂપમાં ભાવેન્દ્રિય પણ છે નહિ. ૨૦૩

૪૪૯ પર્યાય છે જીવની જ પણ ભાવેન્દ્રિય ખંડરૂપ ખરે;
ક્ષાયોપશમિક છે જ્ઞાન તે પણ દ્રવ્ય તો પૂર્ણ જ ખરે ! ૨૦૩

૪૫૦ ભાવેન્દ્રિયના લક્ષ થકી પણ દ્રવ્ય પકડાતું નથી;
છે દ્રવ્ય પેલે પાર તેથી પકડ સૂક્ષ્મ કરી જરી. ૨૦૩

૪૫૧ આ આત્મમાં અનંત શક્તિઓ તણો છે પિંડ ત્યાં–
દૃષ્ટિ તું જ્યારે સ્થાપશે વિભૂતિ બહુ પ્રગટે ભલા. ૨૦૪

૪૫૨ ઉપયોગને સૂક્ષ્મ કરી અંદર જતાં, સ્વભાવ ભૂત–
રિદ્ધિ અને સિદ્ધિ વળી આનંદ સાગર પ્રગટશે. ૨૦૪

૪૫૩ છે જ્ઞાન સાગર, સુખ તણો સાગર વળી આ આતમા;
કેવળ વહે જ્યાં કાળ અનંતો એહવો આ આતમા. ૨૦૪

૪૫૪ સાગરમહીં બહુ જોરથી તરંગ, પણ વધઘટ નહીં;
કેવળ વહે કાળ અનંત પણ દ્રવ્યમહીં વધઘટ નહીં. ૨૦૪

૪૫૫ ચેતનતણી અનંતતા અગાધ વળી અપૂર્વ જે;
ગુરુવચનો બતલાવતાં શુદ્ધાતમા તેથી જણાય છે. ૨૦૫

૪૫૬ ચૈતન્યનો મહિમા થતાં સંસાર મહિમા ના રહે;
ત્યારે જ તો ચૈતન્યનો આ દેવ સમીપ આવી શકે. ૨૦૫

૪૫૭ હે દેવ ! શુદ્ધાતમ તુજ શરણ થકી પરાવર્તનરૂપી–
સહુ રોગ થાય શાંત ને અશાંતિ તો ભાગી જતી. ૨૦૫

૪૫૮ ચૈતન્યનો મહિમા થતાં સંસાર મહિમા ના રહે;
ચેતનમહીં વિશ્રાંતિ છે ને બહાર શાંતિ ના દીસે. ૨૦૫

૪૫૯ તત્ત્વ હું નિર્વિકલ્પ છું, હું જ્ઞાન આનંદથી ભરેલ છું;
બસ તેજ મારે જોઈએ જોતું નથી બીજું કશું. ૨૦૫

૪૬૦ ચેતનતણા અસ્તિતણું છે ગ્રહણ જ્ઞાનીએ કર્યું;
અભેદમાં છે દૃષ્ટિ કે 'હું જ્ઞાન–આનંદ વસ્તુ છું.'૨૦૬

૪૬૧ વિશ્રાંતિ મહેલ મળી ગયો આનંદ જ્યાં ભરપૂર છે;
શાંતિ અને આનંદનું તો સ્થાન ઉજ્જવળ આત્મ છે. ૨૦૬

૪૬૨ જ્ઞાયક રહીને જ્ઞાન તો બધું કરે, પણ દૃષ્ટિ તો–
અભેદ પર, ને જોરથી પોતા તરફ તે ખેંચતો. ૨૦૬

૪૬૩ શુદ્ધોપયોગ કર્યો નહીં, કર્મરાશિ ના નાશ થશે;
જ્ઞાયક મહીં તું જા પછી ક્ષણમહીં તે ચાલ્યા જશે. ૨૦૭

૪૬૪ તું એક પણ તુજ શક્તિ તો અનંતાનંત છે;
અનંત કર્મો હોય તેને શક્તિ તુજ પહોંચી વળે. ૨૦૭

૪૬૫ તું ઊંઘતો રહેતો સદા તેથી બધાં આવી રહે;
તું જાગતો રહેશે પછી જાતે જ સૌ ભાગી જશે. ૨૦૭

૪૬૬ બાહ્ય દ્રષ્ટિથી કદી અંતર્દષ્ટિ તો પ્રગટ નહીં;
આત્મા બહાર વસે નહીં, આત્મા રહે અંદરમહીં. ૨૦૮

૪૬૭ મારે બહાર જવું નહીં, પરિણામ ના ભટકાવજે—
આત્મામહીં જ લગાડ, લે શરણું, ગ્રહણ તેનું કરે. ૨૦૮

૪૬૮ મોટાતણાં આશ્રય થકી આત્મામહીં સૌ પ્રગટશે;
શક્તિ અગાધ છે ચેતને તે ચક્રવર્તીને તું ગ્રહે. ૨૦૮

૪૬૯ આ એક ચેતન ચક્રવર્તીને સદા ગ્રહજે ભલા;
ઉપયોગ જાય બહાર પણ અવલંબન છે અંદર સદા. ૨૦૮

૪૭૦ એ રીત વારંવાર તું કરતાં ક્ષપક શ્રેણીમાં જશે;
વસ્તુ ઉપર દ્રષ્ટિતણો છે દોર તો પૂરણ થશે. ૨૦૮

૪૭૧ રાજા ખરે નિજ મહેલમાં, ઊંડો બહુ રહેતો સદા;
ચૈતન્ય રાજા નિજ મહેલમાં ઊંડો રહે, જા ત્યાં જરા. ૨૦૯

૪૭૨ પોતે ન મારગ જાણતો, જાણેલ સાથ ન રાખતો;
તો એક ડગલું પણ અરે ! શી રીત તું ભરશે, અહો !૨૧૦

૪૭૩ તું આંધળો, ગુરુવાણી ને શ્રુતનું ન અવલંબન જરી;
સાધકતણો જે માર્ગ અંદરમાં રહે, ના સૂઝશે. ૨૧૦

૪૭૪ તું આંધળો, ગુરુવાણી ને શ્રુતનું ન અવલંબન જરી;
સમકિત, સાધકપણું વળી કેવળ શી રીત પ્રગટે પછી ?૨૧૦

૪૭૫ મારગ અજાણ અનંતનો, ગુરુવાણી આગમ ના સાથ છે;
તું કેમ તે જાણી શકે ? નિર્ણય ભલે પોતે કરે. ૨૧૦

૪૭૬ નિર્ણય નહીં, ના ધ્યાન સાચું થાય અવલંબન વીના;
માટે જ અવલંબન અને ચીંતવન શ્રુતનું રાખજે. ૨૧૦

૪૭૭ જો યોગ શ્રવણનો હોય તો તત્કાળ બોધક વાણી અને–
સ્વાધ્યાયનો જો યોગ તો આગમ પ્રવર્તન રાખજે. ૨૧૦

૪૭૮ બાકી સમય પણ તું સદા ગુરુવાણી ને જે આગમે–
ભગવાન આતમા બતાવીયો વિચાર મંથન રાખજે. ૨૧૦

૪૭૯ પડખાં બધાંને જાણીને જ્ઞાન અભેદ તું પ્રગટાવજે;
અંદર સમાયા તે અનંત સમાધિ સુખને પામશે. ૨૧૧

૪૮૦ બહુ લોક જ્ઞાન રહિત જે આ પદ નહીં પામી શકે;
માટે જ તું તે જ્ઞાનપદની શીઘ્ર રે ! પ્રાપ્તિ કરે. ૨૧૧

૪૮૧ કલ્પિત ધ્યાન કરે અને સ્વરૂપને જાણે નહીં;
એ રતન રાશિ સ્વામિને જાણ્યા વિના ધ્યાન નહીં. ૨૧૧

૪૮૨ ધ્યાન કરવું છે જેહનું એ તત્ત્વને ના ઓળખે;
ગ્રહણ નહીં તો ધ્યાનને એકાગ્રતા ક્યાં જામશે? ૨૧૧

૪૮૩ સત લક્ષણ એક જ આતમા એનો જ પરિચય રાખજે;
‘જેવો પરિચય જેહને એવી જ પ્રાપ્તિ તેહને.’ ૨૧૨

૪૮૪ લોકાગ્રમાં વસનાર તું લૌકિકનો સંગ રાખશે–
તારી પરિણતિ પલટવાનું તેહ તો કારણ થશે. ૨૧૨

૪૮૫ જંગલમહીં છે સિંહ તે નિર્ભયપણે છે વિચરે;
રહી લોકથી નિરપેક્ષ તું પુરુષાર્થથી રે ! વિચરજે. ૨૧૨

૪૮૬ ત્યાગી દઈ ભય લોકનો, ઢીલાશને છોડી દઈ;
પુરુષાર્થ કર, ‘શું લોક કહેશે ?’ એમ તું વિચાર ના. ૨૧૩

૪૮૭ શુદ્ધાત્મનો સંબંધ કરી નિર્ભયપણે પુરુષાર્થ કરે;
બસ ! તેજ લોકાગ્રે જનાર સાધક તણો વિચાર છે. ૨૧૩

૪૮૮ સદ્‌ગુરુના ઉપદેશરૂપ નિમિત્તમાં શકિત પૂરી;
તૈયાર ના તું થાય ને પ્રગટાવતો દર્શન નહીં. ૨૧૪

૪૮૯ સંયોગ તો મળ્યાં બહુ અંતરમહીં ડૂબકી નહીં;
સુખ–દુ:ખમાં તો તું એકલો, સ્વર્ગ નરકમાં પણ એકલો.૨૧૪

૪૯૦ સુખદુઃખમાં તું એકલો, સ્વર્ગ—નર્કમાં કોઈ નહીં;
તું એકલો મોક્ષ જશે, દર્શન પ્રગટ કર તું હવે. ૨૧૪

"જીવ એકલો જ મરે, સ્વયં જીવ એકલો જ જન્મે અરે!
જીવ એકનું નીપજે મરણ, જીવ એકલો સિદ્ધિ લહે."

૪૯૧ ગુરુવાણીને તું સાંભળી વિચાર પ્રતીતિ કર હવે;
તો જ્ઞાન—સુખ અનંતનું જે ધામનાં દર્શન થશે. ૨૧૪

૪૯૨ શુભમાં ભલે જોડાય પણ શોધકવૃત્તિ ના જાય છે;
સત શોધ તો ચાલુ રહે ને ધ્યેય શુદ્ધતાનું રહે. ૨૧૫

૪૯૩ 'હું શુદ્ધ છું' કહી ના ભૂલે પર્યાયની અશુદ્ધતા;
સ્વચ્છંદ ના, શુષ્ક નહીં, હૃદય ભીંજાયેલ જ્યાં. ૨૧૫

૪૯૪ સંસારથી થાકેલને સમકિત છે પ્રગટ થતું;
મહિમા રહે વસ્તુતણો જો સંસારથી થાકીશ તું. ૨૧૬

૪૯૫ મારે ન કાંઈ જોઈતું, નિજ આતમા બસ જોઈતો;
દૃઢતા કરી 'દ્રવ્ય જ હું' એ ભાવમાં પરિણમી જતો. ૨૧૬

૪૯૬ દૃષ્ટિ ન એકે ભેદને સ્વીકારતી—દ્રવ્યે રહે;
'સમકિત કે કેવળ થયું?' ના એમ જોવા બેસશે. ૨૧૬

૪૯૭ દ્રવ્યદૃષ્ટિવંત જીવને છે ખબર કાળ અનંતમાં—
દ્રવ્યદૃષ્ટિથી જીવોએ વિભૂતિને પ્રગટ કરી. ૨૧૬

૪૯૮ દ્રવ્યદૃષ્ટિ દ્રવ્યમહીં જે હોય તે પ્રગટ કરે;
'સમકિત મુજને થઈ ગયું' પર્યાયમાં ના ચોંટી રહે. ૨૧૬

૪૯૯ પ્રારંભથી પૂર્ણ સુધી કાઢી બધાને, દ્રવ્ય પરે—
સ્થપાઈને, આશા વગર, નિસ્પૃહભાવે પ્રગટતી. ૨૧૬

૫૦૦ ઉત્પાદ—વ્યય—ધ્રૌવ્ય બધુંએ દ્રવ્યમાં હોવા છતાં;
પર્યાય ને દ્રવ્ય કદી સમાન કોટી ગણાય ના. ૨૧૭

૫૦૧ કોટિ ઊંચી દ્રવ્યતણી ને નાની છે પર્યાયની;
દ્રવ્યદૃષ્ટિમાં રસકસ બહુ, પર્યાયમાં ચોંટે નહીં. ૨૧૭

૫૦૨ અનુભૂતિ ભલેને થાય પણ દૃષ્ટિ નહીં ત્યાં ચોંટશે;
દૃષ્ટિ રહે શાશ્વત પર તે ત્યાં જ જામેલી રહે. ૨૧૭

૫૦૩ 'આશ્ચર્યકારી સ્વભાવ મુજ પ્રગટ થયો અનુભવમહીં';
છે જ્ઞાન એમ જ જાણતું પણ દૃષ્ટિ શાશ્વત પર રહી. ૨૧૭

૫૦૪ એકાંત પ્રેમી હોય તે ઉપલકપણે જોડાય છે;
પણ કોણ જાણે તે બહાર આવ્યો કે નહીં !૨૧૮

૫૦૫ જો કોઈ નબળો હોય તો કાર્યબોજ લાગે આકરો;
તે રીત જ્ઞાની બહારમાં જોડાય બોજો લાગતો. ૨૧૮

૫૦૬ કો પણ કટોકટ સમયમાં કાઢ સમય તું જ્ઞાનાદિનો;
જીવન અમૂલ્ય ચાલ્યું હવે, વ્યર્થ ન જાવા દે હવે. ૨૧૯

૫૦૭ અભ્યાસ કર તું દૃઢ હવે જ્ઞાયક પરિણતિતણો;
શુભભાવનાં કર્તૃત્વમાં કર્તા થશે સર્વલોકનો. ૨૨૦

૫૦૮ શુદ્ધોપયોગ ઊપાદેય છે, માત્ર અંતર્મુહૂર્ત ના–
શાશ્વત અંદર રહી જવું સ્વભાવ કર્તવ્ય ભલા. ૨૨૧

૫૦૯ ઉપયોગ પ્રતિષ્ઠિત કરે નિરાળી દશા મુનિરાજની;
પ્રતિબંધ છે ના પરતણો, પ્રતિબદ્ધ છે જ્ઞાયક મહીં. ૨૨૨

૫૧૦ નિજ ગુણમહીં જ રમણશીલ ને નિરાલંબી હોય છે;
પ્રયાણ મોક્ષપંથમાં ચાલુ કર્યાં, પૂરા કરે. ૨૨૩

૫૧૧ શુદ્ધાત્મમાં જાવું ઠરી છે કાર્ય તે, સર્વસ્વ તે;
શુભભાવતો આવે ભલે પણ તે નહીં સર્વસ્વ છે. ૨૨૪

૫૧૨ અંતરાતમા દિન–રાત આતમ, આતમા કરતાં થકા;
અંતરાત્મભાવે પરિણમી પરમાતમા થઈ જાય છે. ૨૨૪

૫૧૩ ગુરુ વચન રામબાણ સરીખાં વિભાવ તૂટી જાય છે;
સ્વભાવ પ્રગટ થાય છે, અવસર નહીં ચૂકશો હવે. ૨૨૫

૫૧૪ સ્વભાવને પૂર્ણ પણે જોતાં જ ભૂત ને ભવિષ્યની–
સમયમાત્રમાં જણાય છે પર્યાય લોકાલોકની. ૨૨૬

૫૧૫ છે જાણવાની આકાંક્ષા ઘણી—બસ થાઓ હવે;
સ્વરૂપમાં નિશ્ચય જ રહેવું ખરે યોગ્ય બને. ૨૨૬

૫૧૬ આત્મા જ આનંદરૂપ છે, સ્વયંમેવ મંગળરૂપ છે;
તેથી જ સ્વાનુભૂતિ પણ સુખરૂપ, મંગળરૂપ છે. ૨૨૭

૫૧૭ આત્માતણા અસ્તિત્વને તું ઓળખીને જા ઠરી;
અસ્તિત્વ તુજ આશ્ચર્યકારી ભરેલ ગુણ પર્યાયથી. ૨૨૮

૫૧૮ ભગવાનની વાણીમહીં સ્વરૂપ પૂર્ણ ન આવતું;
એ સ્વરૂપનો અનુભવ કરી તેના મહીં તું જા ઠરી. ૨૨૮

૫૧૯ સંયમ—નિયમ ને તપ વિષે આત્મા સમીપ જ હોય છે;
મુનિ સાધના કરવા બન્યા, લૌકિક પરિચય ના હોય છે. ૨૨૯

૫૨૦ શુદ્ધિ વધારવી હોય ને દુઃખ છૂટવાની ભાવના;
અધિક ગુણ કે સરખા ગુણોના સંગમાં વસજે સદા. ૨૨૯

૫૨૧ લૌકિકનો જો સંગ તે પુરુષાર્થ મંદનું કારણ થશે;
વિશેષ સંગ થતાં જ ચેતન નિહાળવાનું વધી જશે. ૨૨૯

૫૨૨ અસત્સંગ આકસ્મિત ત્યાં પુરુષાર્થથી જુદો રહે;
અસત્સંગમાં પણ રસ થકી જો રાચતો, મંદતા વધે. ૨૨૯

૫૨૩ સ્વરૂપ ઝૂલતા મુનિરાજને ભલામણ આચાર્ય દેવની;
નિશ્ચય અને વ્યવહારની આ સંધિ ભૂમિકાનુસારની. ૨૨૯

૫૨૪ આશ્ચર્યકારી આતમા ચોતરફથી તે ઓળખી;
પ્રમાણ—નયના પક્ષને છોડી દઈ અંદર જા ઠરી. ૨૩૦

૫૨૫ તો અંદરથી જે મુકત તે સ્વરૂપ તુજ પ્રગટ થશે;
જે જ્ઞાની અંદર ઠરી ગયા આનંદ અમૃત અનુભવે. ૨૩૦

૫૨૬ આત્માતણા ગુણ ગાઈને ગુણી થયો, ભગવાન છે;
ગુણરત્નનાં સૌ ઓરડા ખુલી ગયા સૌ પ્રદેશમાં. ૨૩૧

૫૨૭ ધ્યાન કરતાં જ્ઞાતાતણું તે જ્ઞાનમય છે થઈ ગયો;
તે ધ્યાનમય છે થઈ ગયો, એકાગ્રતામય થઈ ગયો. ૨૩૧

૫૨૮ નંદનવન મળ્યું બધું શાને બહાર જશે હવે?
ગ્રહવાપણુ લીધું ગ્રહી ને છોડવાનું છૂટી ગયું. ૨૩૨

૫૨૯ આનંદ–જ્ઞાન પ્રગટીયાં, શું બહારમાં બાકી રહ્યું?
નિર્વિકલ્પ જે થઈ ગયા ન બહાર તો આવે કદી. ૨૩૩

૫૩૦ કરવાનું છે બાકી ઘણું જે એમ માને તેહને;
આગળ બહુ વધવાતણો અવકાશ છે ચાલુ રહે. ૨૩૪

૫૩૧ 'કલ્યાણ છે કરવું હવે' પરિણામ બહુ એવાં કર્યાં;
શુભભાવ સંતોષાઈને સાચી વિધિ નહીં જાણતાં. ૨૩૪

૫૩૨ સ્વતઃ સિદ્ધ વસ્તુતણો સ્વભાવ પ્રતિકૂળ શી રીતે ?
અનુકૂળ વસ્તુને રહે, દુઃખરૂપ તે ના હોય છે. ૨૩૫

૫૩૩ ન મલિનતા ટકતી અને ન મલિનતા ગમતી કદી;
ન મલિનતા વસ્તુતણો સ્વભાવ હોઈ શકે કદી. ૨૩૬

૫૩૪ વિભાવથી છૂટી મુક્તિને જો પ્રાપ્ત કરવી હોય તો;
ચૈતન્યના અભેદ તું સ્વરૂપને ગ્રહજે, ભલા ! ૨૩૭

૫૩૫ દ્રવ્યદૃષ્ટિ પર્યાયને દૂરે કરી, નિરપેક્ષ જે–
સામાન્ય છે સ્વરૂપ તેને છે સદા ગ્રહણ કરે. ૨૩૭

૫૩૬ દ્રવ્યદૃષ્ટિ વિષયમહીં ગુણભેદ પણ હોતા નથી;
આવી જ શુદ્ધ દૃષ્ટિને પ્રગટ કરજે તું સદા. ૨૩૭

૫૩૭ આ દૃષ્ટિ સાથે વર્તતું જે જ્ઞાન, ગુણ–પર્યાયને–
તે ભેદ વા અભેદને જાણે પ્રકાર વિવિધ વડે. ૨૩૭

૫૩૮ લક્ષણ, પ્રયોજન આદિથી છે ભિન્નતા ગુણોમહીં;
વસ્તુ અપેક્ષાના ભેદ છે, રે ! જ્ઞાન એમ જ જાણતું. ૨૩૭

૫૩૯ 'પર્યાય આ પ્રગટ થઈ, સમકિત છે આ પ્રગટીયું'
'આ મુનિદશા, કેવળ થયું' છે જ્ઞાન એમજ જાણતું.૨૩૭

૫૪૦ મહિમાવંત એ પર્યાયને ને અન્ય સૌ પર્યાયને;
એ જ્ઞાન તો જાણે ભલે, દૃષ્ટિ ન ક્યાંય રોકાય છે. ૨૩૭

૫૪૧ દેવ—ગુરુની મહિમા વળી શ્રૂતના ચિંતવનતણાં—
અણુ—મહાવ્રત આદિના વિકલ્પ સાધકને ભલે—૨૩૭

૫૪૨ જ્ઞાયક પરિણતિને પરંતુ બોજારૂપ જ લાગતાં;
સ્વભાવથી વિરુદ્ધ ભાવો અધૂરી દશામાં હોય છે. ૨૩૭

૫૪૩ સ્વરૂપમાં એકાગ્રતા, સ્વરૂપમાં વસવાટથી;
તે ભાવ છૂટી જાય છે ને રાગ સર્વે જાય છે. ૨૩૭

૫૪૪ જો ટાળવું પરિભ્રમણને તો બુદ્ધિને તીક્ષ્ણ કરી—
ઓળખ, આવે હાથમાં તો સહજ છે મુક્તિ પછી. ૨૩૮

૫૪૫ શુભ વ્યવહાર પણ અસાર છે, રોકાઈ ના તેમાં જવું;
જે નગર ધ્યેયે ચાલશે તે ગામ ખેતર છોડશે. ૨૩૯

૫૪૬ વચ્ચે શુભાદિ હોય પણ સાધ્ય તો પરિપૂર્ણ છે;
વ્યવહારને તે છોડીને સ્વરૂપમાં પ્હોંચી જશે. ૨૩૯

૫૪૭ કાળ અનંતો વીતી ગયો પરંતુ ન કાંઈ કરી શકયો;
અંદર શુભાશુભને કરી જન્મ મરણને કરતો રહ્યો. ૨૪૦

૫૪૮ ગુણપિંડ નિજ શુદ્ધાત્મને સમજી, કરી દૃષ્ટિ તહીં;
પ્રયાણ કર શ્રદ્ધાન ને અનુભૂતિ ને વિશ્રામ કર. ૨૪૦

૫૪૯ ભગવાન અહો !આ આતમા !સર્વાંગ સહજાનંદ છે !
જયાં જુઓ આનંદ છે, આનંદ ને આનંદ છે ! ૨૪૧

૫૫૦ સાકરમહીં જેવી રીતે સર્વાંગમાં ગળપણ દીસે;
તેવી રીતે આ આત્મમાં સર્વાંગમાં આનંદ છે. ૨૪૧

૫૫૧ લે ઓથ ચેતનદેવની તેનું શરણ તું લે સદા;
તારા બધાં કર્મો તુટીને નાશ થાશે સર્વથા. ૨૪૨

૫૫૨ ચક્રવર્તી રસ્તે નીકળે અપરાધી જીવો ધ્રુજશે;
ચેતન ચક્રવર્તી પાસ પણ જડ કર્મ ના ઉભા રહે. ૨૪૨

૫૫૩ નિત્ય અને અભેદ છે, દૃષ્ટિ વિષયભૂત તત્ત્વ એ—
સ્વરૂપમાં શુદ્ધ—અશુદ્ધ ને પર્યાય—ગુણના ના ભેદ છે. ૨૪૩

૫૫૪ પરમાર્થ એ આત્માથકી પ્રયોજનતણી સિદ્ધિ થશે;
તેનો જ આશ્રય કર તો ત્યાં ધર્મ જરૂર પ્રગટ થશે. ૨૪૩

૫૫૫ વિભૂતિથી જ ભરેલ છે, ગુણ રાશી ત્યાં અનંત છે;
પર્વત મોટો ગુણ તણો, ગુણ ચારે તરફ ભરેલ છે. ૨૪૪

૫૫૬ અવગુણના એકેય છે, ઓહો !હું આ શી ચીજ રે !
એ આત્મના દર્શનતણું કુતૂહલ પણ ન કરેલ છે ! ૨૪૪

૫૫૭ ‘મુક્ત જ છું, ના કંઈ જોઈતું, પરિપૂર્ણને પકડી રહું’;
નક્કી કરે, વિભૂતિ તો આંશિક તુરત પ્રગટ થતી. ૨૪૫

૫૫૮ પ્રગટ થયું ચક્રરતન, નિરાંત ના બેસી રહે;
ચક્રવર્તી લઈ ચક્રને છ ખંડ સાધવા જાય છે. ૨૪૬

૫૫૯ સમકિતરૂપી ચક્રને ચેતન ચક્રવર્તી સાધતો;
અપ્રમત ભાવે તે પછી કેવળને ખરે પ્રગટાવતો. ૨૪૬

૫૬૦ આત્મા થયો સાક્ષાત તે દર્શન ખરે અપૂર્વ છે;
અનંત કાળે ના થયું એવું અહા ! સાક્ષાત છે. ૨૪૭

૫૬૧ દિવ્યદર્શન જે થયું તે અલૌકિક છે મહા;
સિદ્ધ દશાની લબ્ધિ પણ એ અનુભૂતિમાં જઈ મળે. ૨૪૭

૫૬૨ વિશ્વનું અદ્‌ભૂત છે જે તત્ત્વ તે તો તું જ છો;
અંદર જતાં અનંતગુણનો બાગ તુજ ખીલી જશે. ૨૪૮

૫૬૩ છે જ્ઞાન ત્યાં, આનંદ ત્યાં, ત્યાં તું સદા વિહાર કર;
અનંત કાળથી આથડયો તારો વિસામો ત્યાં જ છે. ૨૪૮

૫૬૪ ઊંડો ઊતર અંદર જરી પરમાત્મના દર્શન થશે;
ત્યાંથી બહાર ન આવશે, ગમશે બહાર નહીં ઘડી. ૨૪૯

૫૬૫ મુનિરાજને અંતરમહીં પગલે ઝરે છે પવિત્રતા;
પુરુષાર્થની પર્યાય સૌ પર્યાયે ઝરે પવિત્રતા. ૨૫૦

૫૬૬ રે ! દ્રવ્ય તો તેને કહો કે કાર્ય ત્યાં કરવા ખરે–
બીજા નહીં કો સાધનોની રાહ જયાં જોવી પડે. ૨૫૧

૫૬૭ ભેદજ્ઞાનનું લક્ષ કરી આગમ ચિંતવન તું રાખજે;
ચૌદિશ સૂઝે તે કારણે સતમાર્ગ પણ સૂગમ થશે. ૨૫૨

૫૬૮ પ્રતીતિ થવા ત્રિકાળની 'ભૂત–વર્તમાને શુદ્ધ હું–
ભાવિમહીં શુદ્ધ રહું' વિકલ્પ કરવા ના પડે. ૨૫૩

૫૬૯ પણ વર્તમાન સમય જે એકમાં આત્માતણી–
પ્રતીતિ થઈ, ત્રિકાળ પ્રતીતિ સમાઈ જાય છે. ૨૫૩

૫૭૦ સુખઃદુખ વેદન થાય છે, ના પૂછવાં જાવું પડે;
સ્વાનુભૂતિ જો થાય તો ના પૂછવું કોને પડે. ૨૫૪

૫૭૧ અંતર અજાણ્યો માર્ગ જે ઘટમાળ શી અંદર ચાલતી?
આગમ અને ગુરુવાણીથી નક્કી કરી તે શકાય છે. ૨૫૫

૫૭૨ ભગવાનની સ્યાદવાદ વાણી તત્ત્વને પ્રકાશતી;
જિનેન્દ્ર ને ગુરુવાણીના અવલંબને સાધના થતી. ૨૫૫

૫૭૩ સાધક દશાની સાધના કર એહવી સાધ્ય ફળે;
સાધકદશા પણ જાણજે કે મૂળ ના સ્વભાવ એ. ૨૫૬

૫૭૪ સાધકદશા પ્રયત્નરૂપ અપૂર્ણ દશા તું જાણજે;
ના રાખવા જેવી દશા રે! એમ તું અવધારજે. ૨૫૬

૫૭૫ સ્વભાવની દૃષ્ટિ કરી, અશુદ્ધતાને ખ્યાલમાં–
રાખી કરે પુરુષાર્થ તો, મોક્ષ જરૂર પ્રાપ્ત થશે. ૨૫૭

૫૭૬ વિચાર કર દુનિયામહીં આશ્ચર્યકારી શી ચીજ છે?
ના કોઈ છે, આત્મા જ છે, તારો ખરે, આત્મા જ છે. ૨૫૮

૫૭૭ તેં જગતમાં પ્રયાસ તો સૌ જાતના કર્યાં, અરે!
જોયું બધું, કર્યું બધું પણ આતમા ના ઓળખે. ૨૫૮

૫૭૮ તેં જ્ઞાનરૂપ, સુખ સ્વરૂપી, ગુણરૂપને ના ઓળખ્યો;
ઓળખ હવે, બસ તેજ છે કરવાનું તુજ બાકી, અહો! ૨૫૮

૫૭૯ કો જાતની પ્રવૃત્તિમાં રહેવું ન તુજ સ્વભાવ છે;
નિજમાં રહે, કલ્યાણ તે, હિતકારી ને સર્વસ્વ છે. ૨૫૯

૫૮૦ શુદ્ધાત્મને જાણ્યા વિના ક્રિયાતણાં ઢગલા કરે;
આત્મા ન જાણી શકાય છે, તે જ્ઞાનથી જ જણાય છે. ૨૬૦

૫૮૧ દૃષ્ટિ કરી પૂર્ણતણી આગળ વધે સિદ્ધ થશે;
સ્વભાવમાં અધૂરાશ જો તે માનશે, ના પૂર્ણ થશે. ૨૬૧

૫૮૨ ઉપયોગને સૂક્ષ્મ કરે, સૂક્ષ્મ દ્રવ્ય તો પકડાય છે;
પકડી નિરાંતે આત્મમાં બેસી ગયો, વિશ્વાસ છે. ૨૬૨

૫૮૩ જે સાધના કરનાર છે સ્પૃહા કદી હોતી નથી;
મારે કશું ના જોઈતું આત્મા જ મારે જોઈએ. ૨૬૩

૫૮૪ વીતરાગતા થતી હોય તો બીજું ના કાંઈ જોઈએ;
અંદર રહેવાતું નથી બહાર તેથી અવાય છે. ૨૬૩

૫૮૫ તુજ ચિત્તમાં આત્મા નહીં બીજો જ રંગ સમાય છે;
ત્યાં સુધી રે ! આત્માતણો ના રંગ છે લાગી શકે. ૨૬૪

૫૮૬ બાહ્ય રસ છૂટી જતાં જ્ઞાયક પ્રગટ ત્યાં થાય છે;
આત્મા મળી જો જાય તો વિભાવનું શું કામ છે? ૨૬૪

૫૮૭ છે જાણનારો આતમા, જાગ્રત સ્વરૂપ સદાય છે;
છે જાગતી એ જ્યોત તેને જાણ, જાગૃતિ થશે. ૨૬૫

૫૮૮ જન્મમરણનો નાશ કરી કલ્યાણ કરવું હોય તો—
ચેતનભૂમિ ઊભો રહી પુરુષાર્થને તું સાધતો. ૨૬૬

૫૮૯ જન્મ મરણ નષ્ટ થશે, આચાર્ય કરુણાથી કહે—
મુક્ત સ્વરૂપી આત્મમાં નિસ્પૃહ થઈ ઊભો રહે. ૨૬૬

૫૯૦ ના મોક્ષની સ્પૃહા કશી ચિંતા થકી મુક્ત થતાં—
સ્વયમેવ સુખરૂપ થઈ જશે, ન બહારમાં સુખ મળે, અહા!૨૬૬

૫૯૧ આલંબન કરીને દ્રવ્યનું નિશ્ચય—વ્યવહારની મૈત્રીથી;
આગળ વધતો જાય છે અદ્‌ભૂતતામાં સમાય છે. ૨૬૭

૫૯૨ ના રોગ કો સાધક દશાને રોકતા, ના તોડતા—
ધારાવહી જ્ઞાતાતણી, ઉપસર્ગ ફેરવી ના શકે. ૨૬૮

૫૯૩ છે દેવ–ગુરુ–શાસ્ત્ર જ મંગળ, ઉપકારી પણ તે જાણજે;
એ દેવ–ગુરુને શાસ્ત્રનું દાસત્વ અમને સાંપડે. ૨૬૯

૫૯૪ ગુરુદેવથી મારગ મળ્યો મારગ પ્રકાશ્યો તેમણે–
ગુરુદેવનો ઉપકાર છે ઉપકાર કેમ ભૂલાય રે ! ૨૬૯

૫૯૫ ગુરુદેવનું આ દ્રવ્ય તો અલૌકિક મહાન છે !
શ્રુતજ્ઞાન ને વાણી અહો ! આશ્ચર્યકારી મહાન છે. ૨૬૯

૫૯૬ છે દ્રવ્ય મંગળ વાણી પણ મંગળ સ્વરૂપ સદાય છે;
મંગળમૂર્તિ, ગુણ ભરેલ તે ભવોદધિ તારણ હાર છે. ૨૬૯

૫૯૭ ગુરુદેવ ચરણ કમળતણી નિરંતરે ભક્તિ હજો;
ગુરુદેવનું દાસત્વ પણ રે ! સર્વદા મુજને હજો. ૨૬૯

૫૯૮ નિજની જિજ્ઞાસા હોય તો માર્ગ મળે, સાધનો છે–
શાસ્ત્રો બધાં, પણ માર્ગ તો પોતા થકી જ જણાય છે. ૨૭૦

૫૯૯ તીવ્ર રુચિ ઊંડી હોઈને ઉપયોગને સૂક્ષ્મ કરે;
તો માર્ગ જરૂર જણાય છે, કારણ વડે કાર્ય થાય છે. ૨૭૦

૬૦૦ તન્મય પણે રસ જેહનો તેને ન તે ભૂલે કદી;
‘આ શરીર તે હું’ માનતો તે ભૂલતો તેને નહીં. ૨૭૧

૬૦૧ જો ઊંઘમાં કો નામથી બોલાવતું, ઉત્તર દીએ–
તન્મયપણું છે શરીરમાં, અનાદિનો અભ્યાસ એ. ૨૭૧

૬૦૨ જ્ઞાયક તણો અભ્યાસ ના, અંદર જવા સૂક્ષ્મ બની–
ધીરો બની ટકવું પડે તે આંકરું છે લાગતું. ૨૭૧

૬૦૩ અભ્યાસ કાર્ય બહારમાં તેથી સરળ તે લાગશે;
જ્યારે કરે ત્યારે ખરે તારે જ કરવાનું, અરે ! ૨૭૧

૬૦૪ થાકેલ, કશું ના જોઈએ, આશા–પિપાસા છે નહીં;
દ્રવ્યમહીં તે જોઈએ, સાચો જિજ્ઞાસુ જાણજે. ૨૭૨

૬૦૫ શાંતિ વસે જે દ્રવ્યમાં છે તેજ મારે જોઈએ;
નિસ્પૃહતાથી ઊંડે જતાં પર્યાય દ્રવ્યે પ્રગટતી. ૨૭૨

૬૦૬ તીક્ષ્ણ પ્રહારો ગુરુતણાં, આતમ જાગી જાય છે;
જ્ઞાયક રુચિ પ્રગટ થતી ને વલણ પણ ત્યાં જાય છે. ૨૭૩

૬૦૭ ભગવાન મળ્યા છે ભક્તને ના મૂકવા તેને ગમે;
ચૈતન્ય હે, જ્ઞાયક અહો ! એમ જ સદા રહ્યાં કરે. ૨૭૩

૬૦૮ ચેતન તરફ રુચિ સદા અંદરમહીં રહ્યાં કરે;
ને હાલતાં ને ચાલતાં પ્રભુ જ સાંભરતા રહે. ૨૭૩

૬૦૯ ચેતનતણો મહિમા નહીં વિભાવ ના તુચ્છ ગણે;
પરથી નહીં વિરક્તતા તો માર્ગ ક્યાંથી રે ! મળે. ૨૭૪

૬૧૦ છે કાળ આ પંચમ ભલે બાહ્ય ફેરફારો ત્યાં થાય છે;
આતમ હિત કરનારને કાળ અસર ના થાય છે. ૨૭૫

૬૧૧ શુભ–અશુભથી જુદો હું જ્ઞાયક છું સર્વ પ્રસંગમાં–
યાદ કરી, ભેદનો અભ્યાસ છે તે ખરી સાર્થકતા. ૨૭૬

૬૧૨ વિરક્તતા પરથી નથી, ના તુચ્છતા વિભાવની–
તાલાવલી પણ છે નહીં, કાર્ય નહીં તેથી બને. ૨૭૭

૬૧૩ જો લગની અંદર લાગતી કાર્ય જરૂર ત્યાં થાય તો–
'કરીશ' કહી કરતો નથી, છે આળસુ તે થઈ ગયો. ૨૭૭

૬૧૪ કો આળસુ એવા હોય છે સૂતા ન બેઠા થાય છે;
બેઠા ન ઊભા થાય તે, આળસ બધે તો થાય છે. ૨૭૭

૬૧૫ કાલે કરીશ, કાલે કરું આળસ કરી મંદ થાય છે;
એ કાલ આજ ન થાય છે, જીવન પૂરું થઈ જાય છે. ૨૭૭

૬૧૬ ગ્રીષ્મમહીં પર્વત પરે તાપથી તૃષિત થયો;
તો એક બિંદુ પાણીનું લેવા તુરત તે દોડતો. ૨૭૮

૬૧૭ સંસાર તાપ બહુ અને સતની પીપાસા લાગતી;
તો સતતણી પ્રાપ્તિ કાજ તે પ્રયત્ન છે ઉગ્ર કરે. ૨૭૮

૬૧૮ પ્રતીતિ કરીને જ્ઞાનથી જે ખ્યાલમાં અસ્તિત્વ લે;
તો તેહને જ્ઞાયક મહા તત્ત્વ, પ્રગટ થાય છે. ૨૭૮

૬૧૯ વિચાર ને મંથન બધું વિકલ્પરૂપ જ હોય છે;
એક ટકતું જ્ઞાયક જુદું તત્ત્વ ખરે આત્મા જ છે. ૨૭૯

૬૨૦ ‘હું તોડું આ વિકલ્પને’ એ પણ ખરે વિકલ્પ છે;
તેનાથી પેલે પાર જુદો ચૈતન્ય મુજ પદાર્થ છે. ૨૭૯

૬૨૧ અસ્તિપણાનાં ખ્યાલમાં જુદું હું જ્ઞાયક તત્ત્વ છું;
એવું ઘૂંટણ રહે સદા તે પણ ખરે સારું ગણું. ૨૭૯

૬૨૨ પુરુષાર્થ ઉગ્રતા હોય ને તે જાતનો ઉપાડ તો–
માર્ગ મળે, પહેલાં સદા નિર્ણય પાકો હોય છે. ૨૭૯

૬૨૩ સ્વભાવ જેને રુચતો અંદર જાગૃત હોય તે–
તેને કદી ન બહારમાં આવવું ગમતું હોય છે. ૨૮૦

૬૨૪ શાંતિ–નિવૃત્તિરૂપ તું, શુભ–અશુભનાં ભાવો બધાં–
આકુળતા પ્રવૃત્તિ છે, છે મેળ તેનો ખાય ના. ૨૮૦

૬૨૫ બહારના કામો બધાં સીમા–મર્યાદા હોય છે;
આનંદ ને વળી જ્ઞાનરૂપ સ્વભાવ અમર્યાદિત છે. ૨૮૧

૬૨૬ જીવને અનાદિ કાળથી બાહ્ય વૃત્તિ જે થઈ ગઈ;
તેની ન મર્યાદા કદી તો ક્યાંથી વળે પાછો પછી ? ૨૮૧

૬૨૭ જે લોક છે બાહ્ય બધો જુદો જ ચેતન જાણવો;
‘આણે કર્યું ને આમ કર્યું’ માને ભલે માણસ સહુ. ૨૮૨

૬૨૮ પણ અંદર જ્ઞાની ક્યાં રહે ? તે તો ન તેઓ જાણતા–
જ્ઞાની કરે શું અંદરમહીં જ્ઞાની જ પોતે જાણતા. ૨૮૨

૬૨૯ બહારથી જોનારને જ્ઞાની બહારમાં દેખાય છે;
જ્ઞાની રહે છે ક્યાં અરે ! જ્ઞાની જ પોતે જાણતો. ૨૮૨

૬૩૦ બાહ્ય ક્રિયાઓમહીં વિકલ્પમાં દેખાય પણ–
અંદરમહીં તે ક્યાંય ઊંડે વિચરતા એ હોય છે. ૨૮૨

૬૩૧ દ્રવ્ય ઘણી શક્તિતણો પ્રભુ વળી તે મહાન છે;
સાધકતણી પર્યાય ત્યાં પામરપણું સ્વીકારશે. ૨૮૩

૬૩૨ સાધકતણી પર્યાયને સાધકતણાં દ્રવ્યમહીં–
પ્રભુતા અને પામર તણો વિવેક આવો હોય છે. ૨૮૩

૬૩૩ સાધક દશા અધૂરી જ છે, વીતરાગતા ને પૂર્ણતા–
જ્યાં સુધી પણ છે નહીં પુરુષાર્થ ઉગ્ર જ હોય છે. ૨૮૪

૬૩૪ જ્યાં જ્ઞાન કેવળ થાય ત્યાં ઉપયોગ એક સમયમાં–
ત્રણ કાળ ને ત્રણ લોકને ત્યાં જ્ઞાન પહોંચી જાય છે. ૨૮૪

૬૩૫ પરથી અને વિભાવથી જુદાપણું વિચારવું;
જે એકતા તે તોડવી અભ્યાસ પણ તેનો કરું. ૨૮૫

૬૩૬ આ તો અનાદિના પ્રવાહને બદલાવવો છે સામટો;
અઘરું ઘણું આ કામ છે જાતે જ કરવાનું, અહો ! ૨૮૬

૬૩૭ શા કામની છે હૂંફ જે બહારથી છે સાંપડી ?
રે ! હૂંફ તો નિજ આત્મ તત્ત્વની ખરી જે સાંપડી. ૨૮૬

૬૩૮ નિર્લેપ છો, પર્યાયમાં નિર્લેપ તું રહેજે સદા;
ના ક્યાંય ખેદાવું, ન કરવો રાગ, ખેંચાવું નહીં. ૨૮૭

૬૩૯ વસ્તુ સદા સૂક્ષ્મ જ છે, ઉપયોગ છે સ્થૂળ થઈ ગયો;
તો પકડવા તત્ત્વ સૂક્ષ્મને ઉપયોગને સૂક્ષ્મ કરો. ૨૮૮

૬૪૦ ચૈતન્ય ઊંડી ભાવના ભવ અન્યમાં સાથે રહે;
શાશ્વત સદા છે આતમા, સંસ્કાર છે સાથે રહે. ૨૮૯

૬૪૧ ઉપલક વિચારોમાં નહીં અંદર ઘોલન થાય જો–
તત્ત્વ વિચારો સાથ તે સંસ્કાર છે સાથે રહે. ૨૮૯

“तत्प्रति प्रीतिचित्तेन येन वार्तापि हि श्रुता ।
निश्चितं स भवेद्भव्यो भाविनिर्वाणभाजनम् ॥”

૬૪૨ પ્રસન્ન રાખી ચિત્તને આ વાત છે જે સાંભળે;
તે ભવ્ય ભાવિ મુક્તિનું અવશ્ય ભાજન થાય છે. ૨૮૯

૬૪૩ છે જ્ઞાન પ્રધાન આતમા, અનંત ગુણનો પિંડ છે;
તન્મય થવું અંદરમહીં તે એક જ કરવું કાર્ય છે. ૨૯૦

૬૪૪ સ્વરૂપને સમજી અને 'જ્ઞાયક હું' જો લગન એ–
લાગે પછી જ્ઞાયક સહ તદાકારતા થઈ જાય છે. ૨૯૦

૬૪૫ જિન મંદિર પ્રતિમા જિનતણી મંગળ સ્વરૂપી હોય છે;
સમવસરણે બીરાજતા ભગવાનની તો વાત શી ? ૨૯૧

૬૪૬ ભગવાન ગુણ મહિમા નહીં સુરેન્દ્ર પણ છે કહી શકે;
બીજા બધા મહિમા અહો !શી રીત રે !વર્ણવી શકે ? ૨૯૧

૬૪૭ જે વખતમાં જ્ઞાનીતણી પરિણતિ બહાર જણાય છે;
તે વખતમાં પણ તેમને જ્ઞાયક જુદો જ જણાય છે.૨૯૨

૬૪૮ જો કોઈને પાડોશી સહ બહુ મિત્રતા, બહુ જાય ત્યાં;
પણ તે કદી પાડોશીમાં પોતાતણું ના માનશે. ૨૯૨

૬૪૯ જ્ઞાની નહીં વિભાવમાં એકત્વને ધારણ કરે;
નિર્લેપ કમલ સમાન તે ભિન્ન સદા તરતા રહે. ૨૯૨

૬૫૦ છે જ્ઞાનીની એ ભાવના જો ઊપડે પુરુષાર્થ તો;
થઈ મુનિ કેવળ પામીએ, ન બહાર કદીએ આવીએ. ૨૯૩

૬૫૧ 'જ્ઞાયક સદા' પરિણતી રહે જ્ઞાનીને અખંડિત એહવી;
ભક્તિ અને સ્વાધ્યાયમાં દેખાય છો ઉલ્લાસથી. ૨૯૪

૬૫૨ તો પણ તેની જ્ઞાયકધારા રહે ચાલતી અખંડમાં;
અંતરમાં જ્ઞાયકધારા ભિન્ન જ કાર્ય કરતી રહે. ૨૯૪

૬૫૩ દૃષ્ટિ અપેક્ષા સ્વીકારતાં પર્યાયનો–ગુણભેદનો;
સ્વરૂપમાં જ ઠરી જવાની ભાવના છે વર્તતી. ૨૯૫

૬૫૪ રાગાંશરૂપ બહિર્મુખતા દુ:ખરૂપ જ વેદાય છે;
વીતરાગ અંતર્મુખતા સુખરૂપ સદા વેદાય છે. ૨૯૫

૬૫૫ બહિર્મુખ જે વૃતિ આંશિક સાધક રહે ન્યારો સદા;
કણું સમાય ના આંખમાં વિભાવ ચેતને સમાય ના. ૨૯૫

૬૫૬ સાધક નહીં જો બહારમાં છે દુ:ખનું વેદન કરે;
અંદરમહીં લાગે ન સુખ, અંદર નહીં તો જઈ શકે. ૨૯૫

૬૫૭ છે 'રાગ આગ દહનરૂપ' વળી રાગ 'વિષકુંભ' કહ્યો;
સર્વત્ર એક જ ભાવ કે વિભાવ દુઃખરૂપ કહ્યો. ૨૯૫

૬૫૮ શુભભાવ હો ઊંચો ઘણો કે રાગ હો સૂક્ષ્મ ઘણો;
પણ જેટલી પ્રવૃત્તિ હોય તેટલી આકુળતા વેદાય છે. ૨૯૫

૬૫૯ ને જેટલો નિવૃત્ત થઈ સ્વરૂપમાં લીન થાય છે;
ત્યાં તેટલી શાંતિ સ્વરૂપાનંદ ત્યાં વેદાય છે. ૨૯૫

૬૬૦ છે દ્રવ્ય તો સૂક્ષ્મ સદા તે પકડવા ઉપયોગને–
સૂક્ષ્મ કરી દ્રવ્યમહીં ઊંડો જરા ઊતરી જજે. ૨૯૬

૬૬૧ પાતાળ કૂવો ખોદતાં ઊંડે જતાં જળ સાંપડે;
આશ્ચર્યકારી દ્રવ્યમાં ઊંડે વિભૂતિ પ્રગટશે. ૨૯૬

૬૬૨ તત્ત્વાનુસારી પરિણમન, જે તે જ તારું કાર્ય છે;
જડમાં નથી તુજ કાર્ય ચેતન, તુજ કાર્ય ચેતનરૂપ છે. ૨૯૭

૬૬૩ વિભાવનાં જે કાર્ય તે પરમાર્થથી તારાં નથી;
ઘૂંટણ એહવું રાખવું વિભાવ જડ તે હું નથી. ૨૯૭

૬૬૪ જ્ઞાની રહે નિશંક, ભલે બ્રહ્માંડ પણ ફરતું રહે;
વિભાવના ઉદયો ઘણાં તો પણ ચલિત ન થાય તે. ૨૯૮

૬૬૫ પ્રતિકૂળ સંયોગોથકી જ્ઞાયક પરિણતી ના ફરે;
શ્રદ્ધામહીં ના ફેર ને ચારિત્ર વધતું જાય છે. ૨૯૮

૬૬૬ સ્વતઃ સિદ્ધ વસ્તુતણો સ્વભાવ અનુકૂળ હોય છે;
રાગાદિ જે વિભાવ તે પ્રતિકૂળ, ના સ્વભાવ તે. ૨૯૯

૬૬૭ પરિભ્રમણ કરતાં આત્મને કાળ અનંત વીતી ગયો;
એ કાળમાં 'આત્માનું કરવું' ભાવ પણ એવો થયો. ૩૦૦

૬૬૮ મંથન અને રુચિ ન તત્ત્વની પણ કદી કરતો અરે !
પોસાય એક જ આતમા એવું જીવન કરજે હવે. ૩૦૦

૬૬૯ જીવ રાગના ને જ્ઞાનના ઐક્યમહીં ગૂંચવાય છે;
અસ્તિત્વને જો પકડતો તો ગૂંચ ઉકલી જાય છે. ૩૦૧

૬૭૦ 'જ્ઞાયક છું હું' એહવું અસ્તિત્વ ખ્યાલમાં આવતું;
'જ્ઞાયક સિવાયનું પર બધું' છે એમ ત્યાં આવી ગયું. ૩૦૨

૬૭૧ ના જ્ઞાનીને કંઈ જોઈતું, સંસારથી ભયભીત તે;
સંસારને પીઠ આપીને મોક્ષમાર્ગે તે ચાલશે. ૩૦૨

૬૭૨ સ્વભાવમાં સુભટ અને અંદર નિર્ભય છે રહે;
ના કોઈનો ડર તેમને ઉપસર્ગનો ભય ના રહે. ૩૦૨

૬૭૩ 'ના કોઈનો પ્રવેશ છે' તે એમ છે નિર્ભય રહે;
વિભાવને તે નાગ કાળો જાણીને છોડી દીએ. ૩૦૨

૬૭૪ સમ્યગ્દષ્ટિવંતને અખંડનો આશ્રય છે;
દૃષ્ટિ છૂટે અખંડથી સાધકપણું પણ ના રહે. ૩૦૩

૬૭૫ દૃષ્ટિ રહે અંદર સદા ચારિત્રમાં અપૂર્ણ છે;
તેથી દીસે બહારમાં પણ દૃષ્ટિ તો સ્વમાં જ રહે. ૩૦૩

૬૭૬ ભગવાન પ્રતિમા દેખીને છે થાય– 'ઠરી કેવા ગયા ?'
પ્રતિબિંબ છે ચૈતન્યનું, હું પણ ખરે એવો જ છું. ૩૦૪

૬૭૭ ભગવાન જેવા પવિત્ર છે, તેવો જ હું પવિત્ર છું;
નિષ્ક્રિય છું, નિર્વિકલ્પ હું, પાણી ભરે સૌ મુજ કને ! ૩૦૪

૬૭૮ જો તું તને, જેવો જ તું, તેવો જ તું પ્રગટ થશે;
દેવાધિદેવ પ્રગટાવવા ઉપયોગને સૂક્ષ્મ કરે. ૩૦૫

૬૭૯ જો રુચિનું પોષણ અને તત્ત્વ ઘૂંટણ ચેતને–
સાથે વણાઈ જાય તો કાર્ય જરૂર થાય છે. ૩૦૬

૬૮૦ અભ્યાસ જે અનાદિનો વિભાવમાં જે પ્રેમ છે;
તે છોડ, જેને આતમા પોષાય ન કંઈ પોષાય છે. ૩૦૬

૬૮૧ ના તેમને આત્મા કદી ગુપ્ત રહે, અપ્રાપ્ય નહિ;
જીવ જાગતો ઊભો અહીં, તે જાય કયાં ? પ્રાપ્ય નક્કી. ૩૦૬

૬૮૨ ઉપદેશ છે જે તત્ત્વનો તે અસિધારા સમ ખરે;
જો તદ્દનુસારે પરિણમે તો મોહ ના ઊભો રહે. ૩૦૭

૬૮૩ દ્રવ્ય–ગુણ ને પર્યાયમાં બ્રહ્માંડ આવી જાય છે;
દ્રવ્ય નિજ ગુણે રહી જાતે જ પરિણમી જાય છે. ૩૦૮

૬૮૪ ‘પર્યાય પહોંચે દ્રવ્યને ને દ્રવ્ય પણ પર્યાયને’
એ સૂક્ષ્મતા લે ખ્યાલમાં તો મોહ ના ઊભો રહે. ૩૦૯

૬૮૫ બકરાં તણાં ટોળે રહી સિંહબાળ બકરી માનતું;
પણ સિંહ ગર્જના સાંભળી સિંહ જેમ ત્રાડ પાડતું. ૩૦૯

૬૮૬ વિભાવને પર સાથ રહી વિભાવરૂપ નિજ માનતો;
ગુરુવાણીને તે સાંભળી સ્વરૂપમાં તે જાગ્રત થતો. ૩૦૯

૬૮૭ ‘જ્ઞાયક છું હું–વિભાવ ના’ તે એમ સમજી જાય છે;
જ્ઞાયકપણે તે એ રીતે તુરત પરિણમી જાય છે. ૩૦૯

૬૮૮ અદ્‌ભૂત છે ચૈતન્ય તેમાં ઋદ્ધિનો ના પાર છે;
રમણીય ચૈતન્ય લોકમાંથી ન બહારમાં ગમતું જરી. ૩૧૦

૬૮૯ છે જ્ઞાનની તાકાત એવી સમયમાં જાણે બધું;
નિજ ક્ષેત્રમાં નિવાસ કરી નિજ ઋદ્ધિને તે જાણતો. ૩૧૦

૬૯૦ ના શ્રમ જરા, ના ખેદ છે, અંદર રહી તે જાણતો;
સઘળાંયને તે જાણવામાં ડોકું બહાર ના કાઢતો. ૩૧૦

૬૯૧ વસ્તુ અનાદિ–અનંત જે બદલાય ના, તેના પરે–
દૃષ્ટિ કરે, ધ્યાન ધરે, વિભૂતિને તે પામશે. ૩૧૧

૬૯૨ વિભાવ સુખાભાસ ને ના બાહ્ય સહ કો મેળ છે;
જે જાણતો તે અનુભવે ના કોઈ ઉપમા દઈ શકે. ૩૧૧

૬૯૩ અનાદિના એકત્વમાં સહુ એકમેક જણાય છે;
‘હું માત્ર જ્ઞાન સ્વરૂપ છું’ તું એમ જુદું પાડજે. ૩૧૨

૬૯૪ ગોસળિયાની જેમ જીવ વિભાવ સાથ ભળી ગયો;
ત્યાં ‘જ્ઞાનદોરો’ લક્ષથી એ રીત જુદો ઓળખો. ૩૧૨

૬૯૫ સજ્જન સાથીદાર જો હો માર્ગ તો સરળ બને;
પરમેષ્ઠી સાથીદાર સાથે હોય તે ઉત્તમ ખરે ! ૩૧૩

૬૯૬ આ કાળમાં ઉત્તમ સાથીદાર તો ગુરુદેવ છે;
તે હોય સાથે, ધ્યેય પર પણ પંહોચતો પોતે જ છે. ૩૧૩

૬૯૭ ખંડખંડરૂપી જ્ઞાનનો ઉપયોગ છે પરવશપણું;
પરવશપણું તે દુઃખ છે, સ્વવશ સદા સુખી જ છે. ૩૧૪

૬૯૮ શાશ્વત શુદ્ધ ચૈતન્યના આશ્રયરૂપ સ્વવશપણે;
શાશ્વત સુખ છે પ્રગટતું, સ્વવશ સદા સુખી જ છે. ૩૧૪

૬૯૯ દ્રવ્યદ્રષ્ટિ શુદ્ધ અંતઃતત્ત્વ સદા અવલંબતી;
પર્યાય નિર્મળ બહિર છે, તેને ન પણ અવલંબતી. ૩૧૫

૭૦૦ ચેતન પરિણતિમાં નિજ મહિમા થકી જ તરાય છે;
બાહ્ય મહિમા ભક્તિનો, ના તેથી કાંઈ તરાય છે. ૩૧૬

૭૦૧ ચેતન મહિમાવંતને ભગવાન મહિમા થાય છે;
ભગવાનની મહિમા થકી નિજ મહિમા સમજાય છે. ૩૧૬

૭૦૨ વંદના—પ્રતિક્રમણમાં મુનિ માંડમાંડ જોડાય છે;
ભૂમિકા પ્રમાણે હોય પણ ઉપાધિરૂપ તે લાગતું. ૩૧૭

૭૦૩ સ્વભાવ છે નિષ્ક્રિય, ના બહાર મુનિને રુચતું;
જે કામ જેને ના ગમે બોજારૂપ તેને લાગતું. ૩૧૭

૭૦૪ આ જીવ નિજ લગની થકી જ્ઞાયક પરિણતિ પહોંચતો;
જ્ઞાયક ખરે હું , વિભાવના ભાવો થકી છું હું જુદો. ૩૧૮

૭૦૫ પર્યાયમાં અટકું નહીં, ગુણ અગાધથી છું ભરેલ હું;
હું ધ્રુવ છું, હું શુદ્ધ છું, પરમ પારિણામિક છું ભાવ હું. ૩૧૮

૭૦૬ સમ્યક પ્રતીતિ લગનીમાં વિચાર અનેક પ્રકારના;
પણ પ્રતીતિ એક જ હોય કે ‘જ્ઞાયક સદા હું એક છું.’ ૩૧૮

૭૦૭ વિભાવથી જુદો પડી ચૈતન્યને ગ્રહજે સદા;
પર્યાય સામે જોઈને કરવું નથી પર્યાયમાં. ૩૧૯

૭૦૮ દ્રવ્યદ્રષ્ટિ થતાં પર્યાયમાં રત્નત્રયો પ્રાપ્ત થશે;
ખોદે કૂવો પાણી મળે લેવા જવું તો ના પડે. ૩૧૯

૭૦૯ ચેતન પાતાળ જો ફૂટે તો શુદ્ધ પર્યાયનો—
પ્રવાહ પોતાની જ રીતે ચેતનમહીં છે ચાલશે. ૩૧૯

૭૧૦ તુજ ધરતી અનંતગુણરૂપી બીજથી ભરેલ, રસાળ છે;
એ ધરતીને જ્ઞાનાદિથી સિંચન થતાં ફાલી જશે. ૩૨૦

૭૧૧ પર્યાયમાં દૃષ્ટિ કરે ચૈતન્ય કદી ના પ્રગટશે;
સામર્થ્ય ભર્યું તે દ્રવ્યમાં દૃષ્ટિ કરે તે પ્રગટશે. ૩૨૧

૭૧૨ નિગોદથી સિદ્ધ સુધી પર્યાય, દૃષ્ટિ વિષય ના;
સાધકદશા પણ દૃષ્ટિનાં મૂળ સ્વભાવમાં તો છે નહીં. ૩૨૧

૭૧૩ દ્રવ્યદૃષ્ટિ આગળ વધે, પર્યાયદૃષ્ટિથી નહીં;
દ્રવ્યદૃષ્ટિમાં માત્ર શુદ્ધ અખંડનો જ સ્વીકાર છે. ૩૨૧

૭૧૪ દૃષ્ટિ ન જ્ઞાનીની અખંડે ભેદ છે પાડે કદી;
વિવેક કરે છે જ્ઞાન કે 'આ ભાવ મુજ, આ પર ખરે.' ૩૨૨

૭૧૫ 'આ આટલું તો છે ખરું ને આટલી કચાશ છે';
દૃષ્ટિ ન એમ પરિણમે, છે જ્ઞાન વિવેક ત્યાં કરે. ૩૨૨

૭૧૬ જો સ્વાદ ચાખે શાંતિનો તો રાગ પાલવતો નથી;
ને પરિણતિમાં વિભાવથી છે દૂર ભાગે છે પછી. ૩૨૩

૭૧૭ જો એક બાજુ બરફ ઢગ ને અગ્નિ બીજે હોય તો;
વચ્ચે ઊભેલો અગ્નિથી દૂરે રહે, બરફે ઢળે. ૩૨૩

૭૧૮ સુખ સ્વાદ જેણે ચાખ્યો શાંતિતણું વેદન થયું;
તે રાગ દાહે ભાગશે ને શીતળ તરફ તે ચાલશે. ૩૨૩

૭૧૯ રત્નતણો પર્વત અને રત્ન કણિયો હોય, ત્યાં—
કણિયો પ્રકાશની વાનગી—પર્વત કિંમત અધિક છે. ૩૨૪

૭૨૦ તે રીત કેવળજ્ઞાન મહિમા શ્રુત થકી તો અધિક છે;
એક સમય દ્રવ્ય—ક્ષેત્ર—કાળ—ભાવો બધાને જાણશે. ૩૨૪

૭૨૧ શ્રુતજ્ઞાન જે શ્રુતકેવળીનું શ્રુત બધું ક્ષણમાં ફેરવે;
સામર્થ્ય પણ છે અલ્પ કેવળજ્ઞાન જ્યાં પ્રગટ થયું. ૩૨૪

૭૨૨ કિરણ અનંત પ્રકાશીયા ઋદ્ધિ ચમત્કારિક થઈ—
ક્ષાયિક પૂરણ જ્ઞાનમાં, ક્ષાયોપશમિકથી બહુ ફરક છે. ૩૨૪

૭૨૩ સ્વાનુભૂતિના સમય કે ઉપયોગ હોય બહારમાં;
જ્ઞાનીતણી દૃષ્ટિ રહે, તળ ઉપર ચોંટેલી સદા. ૩૨૫

૭૨૪ તે એકમેક થએલ જો દેખાય છે બહાર કદી—
તો પણ ઊંડી ઊંડી ગુફામહીં, ન બહાર જરી. ૩૨૫

૭૨૫ સ્પર્શ થયો તળનો પછી બાહ્ય બધું થોથું જ છે;
ચેતનતળે પહોંચી ગયો ચેતન વિભૂતિ પામશે. ૩૨૬

૭૨૬ રત્ન મહેલો દેવના શું આતમાને કામના?
છે ખાય રાંધી માનવી, અમી દેવને, સૌ આકુળ છે. ૩૨૭

૭૨૭ છહ ખંડના સાધક ચક્રવર્તીને પણ આકુળતા !
ઋદ્ધિ નહીં, શાંતિ નહીં, વૈભવ બહારના શા કામના? ૩૨૭

૭૨૮ મુનિરાજની શી વાત રે !ઝૂલે પ્રમત—અપ્રમત સદા;
ને તેમને તો સર્વગુણમાં સંપન્ન જ કહી શકાય છે. ૩૨૮

૭૨૯ મુનિરાજ વારંવાર ચેતન નગરમાં પ્રવેશીને;
અદ્‌ભૂત ઋદ્ધિ અનુભવી આનંદતરંગે ડોલશે. ૩૨૯

૭૩૦ અનંત ગુણ ભરપૂર ચેતનદેવ ભિન્ન પ્રકારના—
ચમત્કારિક પર્યાયરૂપ તરંગમાં ડોલે સદા. ૩૨૯

૭૩૧ મુનિરાજ ને સમકિતીનું સંવેદન જુદું હોય છે;
વચનાતીત છે, શૂન્ય નથી, તું જા તહીં દર્શન થશે. ૩૨૯

૭૩૨ જાગૃતપણે ઋદ્ધિ અલૌકિક વેદન અધિક છે;
ત્યાં જા તને ચૈતન્ય તુજ દેવનાં દર્શન થશે. ૩૨૯

૭૩૩ મુનિરાજ આતમ ધામમાં નિવાસ કરીને તે મહીં—
એકાગ્ર થાય વિશેષ ત્યાં વીતરાગતા પ્રાપ્ત કરે. ૩૩૦

૭૩૪ વીતરાગતાથી જ્ઞાનની અદ્‌ભૂત શકિત પ્રગટતી;
ઉપયોગ સ્થૂળ છૂટી જતાં ક્ષણમાંહી સૂક્ષ્મે જાય છે. ૩૩૦

૭૩૫ તે જ્ઞાન નિજ ક્ષેત્રે રહી પહોંચી વળે બધાયને;
મહિમાવંત કેવળ જ્ઞાનમાં તે જાણી લોકાલોકને. ૩૩૦

૭૩૬ હો ભૂત–વર્તમાનની કે ભાવિ બધી પર્યાયને–
પાડ્યા વિના ક્રમ, સમયમાં વર્તમાનવત જણાય છે. ૩૩૦

૭૩૭ સ્વની અનંતી પરિણતી ત્રણ કાળની પર્યાયને;
અનંત પ્રતિચ્છેદો બધાં એક સમયમાં જ જણાય છે. ૩૩૦

૭૩૮ અચિંત્ય મહિમાવંત આ કેવળજ્ઞાનને વીતરાગ એ–
મુનિરાજ છે ધારણ કરે, મુનિરાજ છે પ્રાપ્ત કરે. ૩૩૦

૭૩૯ જ્યમ કમળ ખીલશે ત્યાં હજારો પાંખડી પણ ખીલશે;
કેવળ થતાં ચેતન અનંતી પાંખડીએ ખીલશે. ૩૩૦

૭૪૦ કેવળ થતાં ભગવાન આતમ જ્ઞાન–આનંદાદિની–
અનંત ગુણ પર્યાયમાં આદિ–અનંત કેલિ કરે. ૩૩૦

૭૪૧ નિજ ધામમાં અંદર સદા શાશ્વતપણે બીરાજશે;
ત્યાંથી ફરીથી બહારમાં ના નિશ્ચયે તે આવશે. ૩૩૦

૭૪૨ તું કયાંય રોકાયા વિના 'જ્ઞાયક છું' એ નિર્ણય કરે;
શ્રદ્ધા અને તું જ્ઞાનમાં લઢણ પણ તેનું કરે. ૩૩૧

૭૪૩ દુ:ખનાં બળે એકાંતથી ના એ કદી છૂટો પડે;
દ્રવ્ય દૃષ્ટિના જોરે કરી એકાંત એ છૂટો પડે. ૩૩૨

૭૪૪ દુ:ખ લાગતું તો હોય ને ગમતું નહીં પણ હોય છે;
પણ આત્મની ઓળખ વિના જાણ્યા વિના એ જાય કયાં ?૩૩૨

૭૪૫ જો આતમાને ઓળખે, જો આતમાને જાણતો;
અસ્તિત્વને ગ્રહણ કરે છે તો જ એ છૂટો થતો. ૩૩૨

૭૪૬ 'છે આવડે મુજને ઘણું' રસ્તે ન ચડવું એહવું;
રે ! ચેતવું, વિભાવના રસ્તે અનાદિ ચાલીયો. ૩૩૩

૭૪૭ માથે હશે ગુરુ રોકશે, હો લગામ તો પાછો ફરે;
પોતાતણી ને બીજી લગામ ગુરુની હોય છે. ૩૩૩

૭૪૮ આવડતના તું માનથી દૂર રહે તો સારું છે;
પ્રસંગ બહાર પડવા થકી તું દૂર ભાગે તો લાભ છે. ૩૩૩

૭૪૯ પ્રસંગ તે બહાર પડવાતણાં તે તો બધા નિઃસાર છે;
સારભૂત જો હોય તો એક આત્મનો સ્વભાવ છે. ૩૩૩

૭૫૦ આત્માર્થી ગુરુ સંગથી પુરુષાર્થ સહેજે થાય છે;
'સેવક છુ હું આપનો' દૃષ્ટિ રહે એ જરૂરી છે. ૩૩૪

૭૫૧ 'હું કાંઈક' એવું થાય તો સેવકપણું છૂટી જાય છે;
સેવક થયે છે લાભ બહુ, આત્મા પ્રગટ તો થાય છે. ૩૩૪

૭૫૨ ના છોડવો ધરમ કદી, સંયોગ બાહ્ય કઠીન પણ–
ના છોડવી રુચિને કદી, તે છૂટતાં હારી જશે. ૩૩૫

૭૫૩ કર્મોતણાં વિપાકમાં જ્ઞાયક કદી ચળતો નથી;
નિર્લેપ કમળ કાદવ મહીં ચૈતન્ય તેમજ કર્મથી. ૩૩૬

૭૫૪ જો દ્રવ્યને ગ્રહણ કરે તો શુદ્ધતા ત્યાં પ્રગટશે;
ચારિત્ર પણ ત્યાં પ્રગટશે પણ જ્ઞાની નહીં ત્યાં અટકશે. ૩૩૭

૭૫૫ પડયું ઘણું, ભર્યું ઘણું ત્યાં, દૃષ્ટિ ત્યાંથી ના ખસે;
પર્યાયમાં રોકાય, ચોંટી જાય તો મિથ્યાત્વી થશે. ૩૩૭

૭૫૬ શુભભાવમાં શ્રમ, થાક–ના આત્માતણો સ્વભાવ તે;
શુદ્ધભાવ છે સ્વાધીન ત્યાં ના થાક, સુખથી ભરેલ છે. ૩૩૮

૭૫૭ જો ફાળકામાં ગૂંચ તો ધીરજ થકી ઊકેલતાં–
છેડો મળે છે હાથમાં ને ગૂંચ નીકળી જાય ત્યાં. ૩૩૯

૭૫૮ ચૈતન્ય દોરે ગૂંચ જે અનાદિની, ધીરજ થકી–
ઊકેલતાં છેડો મળે ને ગૂંચ નીકળી જાય છે. ૩૩૯

૭૫૯ 'આનું કરું, આનું કરું' બહાર ધ્યાન રોકાય કાં ?
તું આટલાં તુજ ધ્યાનને તારામહીં જ લગાડ, હા ! ૩૪૦

૭૬૦ ચેતન પદારથ આશ્રયે અનંત ને અદ્‌ભૂત જે–
આતમવિભૂતિ પ્રગટતી, પ્રાપ્ત ન શું શક્તિ થકી ? ૩૪૧

૭૬૧ અંતરમહીં આતમા, ગુરુ–દેવ–શાસ્ત્ર બહારમાં–
પ્રયોજન તું રાખજે, અન્ય તણું શું કામ છે? ૩૪૨

૭૬૨ દેવાદિને વ્યવહારથી સાધનરૂપ કહેવાય છે;
ને તેમનું આલંબન પણ આવ્યાં વિના છે ના રહે. ૩૪૨

૭૬૩ શુભભાવ તે પણ હેય છે તો અશુભની તો વાત શી?
અન્ય પદાર્થોથી અરે ! તારે પ્રયોજન ના જરા. ૩૪૨

૭૬૪ મુખ્ય કરીને આતમા, દેવાદિ આલંબન રહે;
સાધક દશામાં ભાવ શુભ આવ્યા વિના છે ના રહે. ૩૪૨

૭૬૫ પદ્મપ્રભમલધારી દેવ મુનિરાજ પણ એમ જ કહે;
જ્યાં હોઉં ત્યાં જિનરાજ તુજ પાદપંકજે ભક્તિ રહે. ૩૪૨

૭૬૬ પુરુષાર્થથી, સ્વભાવ પરિણત, ટાળી વિભાવ, સિદ્ધ થયાં;
જો હોય ભળવું સિદ્ધ મંડળ કર હવે પુરુષાર્થ ત્યાં. ૩૪૩

૭૬૭ પુરુષાર્થ વિણ ના કોઈનો ભવાન્ત તો આવી શકે;
ઘોડા છલાંગની જેમ કો ને કો ધીમેથી પંહોચી જશે. ૩૪૩

૭૬૮ પામે, ટકે, આગળ વધે છે વસ્તુમાં પુરુષાર્થથી;
અંદર લાવ તું પુરુષાર્થને સ્વભાવ સહજ તો પ્રગટશે. ૩૪૩

૭૬૯ સામાન્ય છે જે તત્ત્વ તે જો ખ્યાલમાં ના આવતું;
સુઝે નહીં તો માર્ગ ને ના તત્ત્વ તો એ પ્રગટતું. ૩૪૪

૭૭૦ સામાન્યનો કરી ખ્યાલ તું આશ્રય કર પણ તેહનો;
પ્રારંભથી ને અંત સુધી આશ્રય રહે જ્ઞાયકતણો. ૩૪૪

૭૭૧ જ્ઞાયકતણું કે ધ્રુવનું ના જોર ક્ષણ પણ છે ખસે;
દૃષ્ટિ ન જ્ઞાયક સિવાય છે કોઈને સ્વીકારશે. ૩૪૪

૭૭૨ દૃષ્ટિ ન ધ્રુવ સિવાય છે એ કોઈને ગણકારતી;
પર્યાય હો શુદ્ધ, અશુદ્ધ હો, ગુણ ભેદ ના ગણકારતી. ૩૪૪

૭૭૩ સાથે રહેલું જ્ઞાન છે કરે વિવેક બધાયનો;
તો પણ વિષય દૃષ્ટિતણો, જ્ઞાયક કદી ના છૂટતો. ૩૪૪

૭૭૪ ગુરુદેવનો ઉપદેશ આ, શાસ્ત્ર પણ એમ જ કહે;
વસ્તુ સ્થિતિ પણ આમ છે, તું એમ નિશ્ચય જાણજે. ૩૪૪

૭૭૫ માર્ગ ખરે જ મોક્ષનો તે ટૂંકમાં તું જાણજે—
‘અંદરમહીં જ્ઞાયક સદા તું આતમાને સાધજે.’ ૩૪૫

૭૭૬ વિસ્તાર તેનો જો કરે રહસ્ય અનંતું સાંપડે;
કારણ વસ્તુમહીં અનંતા ભાવો અહા ! ભરેલ છે. ૩૪૫

૭૭૭ સર્વાર્થસિદ્ધિદેવ પણ તેત્રીસ સાગર કાળની—
ચર્ચા કરે, સ્તુતિ કરે, સંક્ષેપ પણ તું જાણ આ— ૩૪૫

૭૭૮ ‘શુભ અશુભથી ન્યારા સદા જ્ઞાયક તણો આશ્રય લઈ—
જ્ઞાયક પણે પરિણત થવું’—સંક્ષેપ એ તું જાણજે. ૩૪૫

૭૭૯ ગુરુદેવ તો જાગૃત કરે છે જીવ ભારતનાં બધાં;
ના ચોખવટ થઈ સેંકડો વર્ષો થકી તે થાય હ્યાં. ૩૪૬

૭૮૦ સમજી શકે સૌ બાળકો ભાષામહીં મારગ કહ્યો;
અદ્‌ભુત છે પ્રતાપ, લેવા લાભનો આ કાળ છે. ૩૪૬

૭૮૧ ના જોઈતું મારે કશું, શાંતિ જ મારે જોઈએ;
શાંતિ ન ક્યાંયે છે અરે ! વિભાવ—આકુળતા બધે. ૩૪૭

૭૮૨ કંટાળી અશુભથી શુભમહીં ને શુભથી થાકી અશુભમાં;
કાળ અનંતો વીતી ગયો શાંતિ હવે તો જોઈએ. ૩૪૭

૭૮૩ ઊંડાણ જાગે ભાવના, ઓળખાણ છે સ્વરૂપની;
સ્વરૂપ પ્રતીતિ થાય ને શાંતિ મળ્યાં વિણ ના રહે. ૩૪૭

૭૮૪ રુચિ ઉગ્રતાએ સહજ ને રુચિ મંદતાથી કઠણ છે;
પુરુષાર્થ લાગે સરળ વા કઠિન રુચિના પ્રમાણમાં. ૩૪૮

૭૮૫ પ્રમાદથી દુર્ગમ અને પુરુષાર્થથી પમાય છે;
પોતે જ છે કારણ બધે ના અન્ય કો કારણ ખરે. ૩૪૮

૭૮૬ સુખધામ છે, તુજ આત્મમાં આશ્ચર્યકારી નિધિ છે;
મહિમા કરી, પુરુષાર્થથી પ્રમાદને તું તોડજે. ૩૪૮

૭૮૭ ચક્રવર્તી—બળદેવ ને તીર્થંકરો ચાલ્યાં કહી—
'આ રાજ આ વૈભવ નહીં જોઈએ અમને ફરી.' ૩૪૯

૭૮૮ કરીને ઉપેક્ષા સર્વની ને સાધનાની ધૂનથી;
એ એકલા જંગલમહીં ચાલ્યા ! અહો ! છોડી બધું. ૩૪૯

૭૮૯ ખામી નહીં કો વાતની ઈચ્છા કર્યે મળતું હતું;
ઈંદ્રો કરે સેવા સદા ભગવાન કહી સંબોધતા. ૩૪૯

૭૯૦ ઉત્કૃષ્ટ પુણ્યતણાં ઘણી ઋદ્ધિ બધી છોડી ગયા;
ઉપસર્ગની દરકાર ના ધ્યાન કરવા વનમાં ગયા. ૩૪૯

૭૯૧ લાગ્યો હશે આત્મા જ મહિમાવંત આશ્ચર્યકર સદા;
તુચ્છ બધું એ જાણીને ચાલ્યા હશે જંગલ, અહા ! ૩૪૯

૭૯૨ માટે તું મહિમા લાવીને આશ્ચર્યકર આત્માતણો;
પોતા થકી ઓળખ કરી પુરુષાર્થ કર પ્રાપ્તિ તણો. ૩૪૯

૭૯૩ ના સ્થિરતાથી છોડી શકે શ્રદ્ધા અપેક્ષા છોડ તું;
ના છોડતા કંઈ તુજ જશે આત્મા તણી પ્રાપ્તિ થશે. ૩૪૯

૭૯૪ જીવ જ્ઞાન ને ક્રિયાતણાં સ્વરૂપને ના જાણતો;
પોતે કરી રહ્યો બન્ને એમ ભ્રમણા સેવતો. ૩૫૦

૭૯૫ ભંગભેદ, બાહ્ય જ્ઞાન વળી તે ધારણાને 'જ્ઞાન' ગણે;
પરગ્રહણ, ક્રિયા, ત્યાગ ને શુભભાવને 'ક્રિયા' ગણે. ૩૫૦

૭૯૬ 'મને આટલું છે આવડે ક્રિયા કરું હું આકરી'
કલ્પે બહુ એવું બધું તે હૂંફ ખોટી મેળવી. ૩૫૦

૭૯૭ સ્વાનુભૂતિવિણ 'જ્ઞાન' ના, જ્ઞાયક આલંબન થકી—
સ્વભાવરૂપે પરિણમી જે થાય 'ક્રિયા' તે ખરી. ૩૫૦

૭૯૮ પૌદ્‌ગલિક ક્રિયા કદી ના આત્મા અરે ! કરી શકે;
જડ કાર્યરૂપ જડ પરિણમે આત્માથકી એ ના બને. ૩૫૦

૭૯૯ કાર્ય શરીરનાં મુજ નહીં, વિભાવ સ્વરૂપ પરિણત નથી;
'હું તો સદા જ્ઞાયક રહું' એ પરિણતિ જ્ઞાયક તણી. ૩૫૦

૮૦૦ મોક્ષાર્થીને નિજ જીવનમાં ઘૂંટણ એવું હોય છે;
સવિકલ્પ હો શરૂઆતમાં નિર્ણય પાકો હોય છે. ૩૫૦

૮૦૧ પુરુષાર્થ જલ્દી જો કરે જલ્દી નિર્વિકલ્પ બને;
પુરુષાર્થ જો મોડો કરે તો દર્શન મોડું થાય છે. ૩૫૦

૮૦૨ નિર્વિકલ્પ સ્વાનુભૂતિથી સ્થિરતા વધી મોક્ષ મળે;
આ વિધિ મોક્ષ પ્રાપ્તિની, ના અન્ય કો વિધિ, ખરે ! ૩૫૦

૮૦૩ કો પ્રસંગ એકાકાર ના, મોક્ષ સિવાયનું કામ ના;
પ્રથમ ભૂમિકા હોય પણ મોક્ષ અભિલાષા હોય, હા. ૩૫૧

૮૦૪ જે મોક્ષઅર્થી હોય ને સંસારથી થાકેલ છે;
ગુરુદેવ વાણી ધોધથી તે માર્ગને પ્રાપ્ત કરે. ૩૫૧

૮૦૫ જો થાક અંદર લાગશે જ્ઞાની દિશા સૂઝાડશે;
પ્રયત્ન અંદર થાય જો આત્મા મળી તો જાય છે. ૩૫૧

૮૦૬ દ્રવ્યે પ્રભુ પરિપૂર્ણ છું, ભગવાન છું, કૃતકૃત્ય છું;
માને ભલે 'પર્યાયથી પામર' નિજને જાણતા. ૩૫૨

૮૦૭ ગણધર કહે—જિનેન્દ્રના હું જ્ઞાનને ન પહોંચી શકું;
એક સમયના એ જ્ઞાનમાં નિજની ને લોકાલોકની— ૩૫૨

૮૦૮ પર્યાય અનંત જણાય છે, કયાં આપનું એ જ્ઞાન જે—
અનંત દ્રવ્ય પર્યાયને જાણે અને કયાં અલ્પ મારું જ્ઞાન, રે !૩૫૨

૮૦૯ આપ અનુપમ આનંદરૂપ સંપૂર્ણ પરિણમિત થયાં;
ક્યાં આપનો આનંદ પૂરણ ? ક્યાં અલ્પ મુજ આનંદ રે ? ૩૫૨

૮૧૦ એ રીત અનંત ગુણોતણી પર્યાયમાં સંપૂર્ણપણે—
છો આપ તો પરિણમી ગયા, શો આપનો મહિમા અહો ! ૩૫૨

૮૧૧ ને આપને તો દ્રવ્ય જેવું પર્યાય તેવી પરિણમી;
રે ! મુજતણી પર્યાય તો અનંત ભાગે રહી ગઈ. ૩૫૨

૮૧૨ એ રીત સૌ સાધક નિજને દ્રવ્ય અપેક્ષાએ કરી—
નિજને ભલે એ માનતો ભગવાન, પણ એ જાણતો— ૩૫૨

૮૧૩ પણ જ્ઞાન ને આનંદ વળી ચારિત્ર—વીર્યાદિ બધી—
પર્યાય અપેક્ષાએ સદા નિજ પામરતા પહિચાનતો. ૩૫૨

૮૧૪ ચેતન પરમ પારિણામિકની પદ્મપ્રભમલ ધૂન લગાવી છે;
મહિમાવંત પવિત્રતા આશ્રય થકી પૂર્ણ થશે. ૩૫૩

૮૧૫ જે મલિન, અંશે નિર્મળ અને જે અધૂરું હોય છે;
કે શુદ્ધ ને પૂર્ણ છતાં સાપેક્ષ છે, અધ્રુવ છે. ૩૫૩

૮૧૬ ત્રિકાળ પૂર્ણ સામર્થ્ય નથી આશ્રય કરે તેઓ તણો;
તો શુદ્ધતા ના પ્રગટતી, મુક્તિ નહીં તેની થતી. ૩૫૩

૮૧૭ માટે જ ઔદયિક વળી ક્ષાયોપશમિક ભાવને—
ઔપશયિક—ક્ષાયિક બધાં અવલંબવા યોગ્ય નથી. ૩૫૩

૮૧૮ જે પૂર્ણ નિર્મળ, પરિપૂર્ણ છે, પરમ નિરપેક્ષ છે, ધ્રુવ સદા—
ત્રિકાળ પૂર્ણ સામર્થ્યવંત પરમ પારિણામિક જે— ૩૫૩

૮૧૯ છે તેજ પારમાર્થિક, અસલી વળી એ વસ્તુનો—
આશ્રય કરવા યોગ્ય છે ને શરણ લેવા યોગ્ય છે. ૩૫૩

૮૨૦ તેના થકી સમકિતથી માંડી પછી મોક્ષ દશા—
પ્રાપ્ત થશે, માટેજ તે અવલંબન કરવા યોગ્ય છે. ૩૫૩

૮૨૧ જે સહજ ભાવે રહેલ છે જ્ઞાન—દર્શન આનંદાદિ જે—
ગુણો અનંતા તે બધાં છે પારિણામિકરૂપ જ બધાં. ૩૫૩

૮૨૨ તો પણ ચેતન દ્રવ્યનાં એક અંશરૂપ હોવા થકી—
તે ભેદરૂપ અવલંબતા નિર્મળતા ના પ્રગટ થતી. ૩૫૩

૮૨૩ તેથી પરમ પારિણામિકરૂપ અનંત ગુણ સ્વરૂપી—
અખંડ—અભેદ પરમાતમ દ્રવ્યતણો આશ્રય કરો. ૩૫૩

૮૨૪ દૃષ્ટિ કરીને શરણ લો, ધ્યાન કરો પણ તેહનું—
જેથી અનંતી નિર્મળ અહા !પર્યાય સહુ ખીલી જશે. ૩૫૩

૮૨૫ દ્રવ્યદૃષ્ટિ કરી અખંડિતે એક જ્ઞાયક વસ્તુ સદા;
લઈ લક્ષમાં અવલંબજો, આશ્રય પણ તેનો કરો. ૩૫૩

૮૨૬ અનંત ગુણમય આતમા પણ દૃષ્ટિના ભેદોને ગ્રહે;
તે એક, અખંડ, ત્રિકાળને અભેદરૂપે ગ્રહણ કરે. ૩૫૩

૮૨૭ આ ભાવ પાવન પૂજનીય, આશ્રય થકી સમકિત મળે;
આવે મુનિપણું, સુખશાંતિ ને વીતરાગ થઈ મુક્તિ લહે. ૩૫૩

૮૨૮ ભગવાન પ્રકાશેલ આ દિગંબર ધરમ સત્ય સદા;
ગુરુદેવ યુક્તિ ન્યાયથી સ્પષ્ટ પણે સમજાવતા. ૩૫૪

૮૨૯ માર્ગ છણાવટ બહુ કરી સ્વતંત્રતા દ્રવ્યતણી–
દ્રવ્ય–ગુણ ને પર્યાય, ઉપાદાન ને નિમિત્ત વળી– ૩૫૪

૮૩૦ નિશ્ચય તથા વ્યવહારને આતમ શુદ્ધ સ્વરૂપને–
સમકિત સ્વાનુભૂતિ મોક્ષમાર્ગ સત્યરૂપે કહે. ૩૫૪

૮૩૧ ગુરુદેવની શ્રુતધાર જુદી માર્ગ તરણ બતલાવતા;
પ્રવચનમહીં બહુ ઘોળીને રહસ્યો બધાં તે કાઢતાં. ૩૫૪

૮૩૨ તેઓશ્રીના પ્રતાપથી બહુ જીવ મારગને સમજતા–
પંચમકાળ આ યોગ મળ્યો તે આપણું ભાગ્ય મહા ! ૩૫૪

૮૩૩ ઉપકાર સહુ ગુરુદેવનો, ગુરુ ગુણથી ભરપૂર છો;
મહિમાવંત તે ગુરુ ચરણની સેવા અંતરપટમાં વસો. ૩૫૪

૮૩૪ ઉપાય તરવાનો કંઈ ચમત્કારમાં ન રહેલ છે;
સાધકતણું લક્ષણ નથી જે બહારમાં ચમત્કાર તે. ૩૫૫

૮૩૫ ચમત્કાર ચેતન દ્રવ્યમાં સાધકતણું લક્ષણ ખરું;
દર્શન નહીં આતમતણાં, કણ રાગ જો હિતકર ગણું. ૩૫૫

૮૩૬ નિસ્પૃહ એવો થા હવે–'બીજું ન કાંઈ જોઈએ–
મારે હવે, મારું જ અસ્તિત્વ ખરે છે જોઈએ.' ૩૫૫

૮૩૭ રઢ લાગતી આત્માતણી ઉત્થાન અંદર થાય જો;
તો પરિણતિ આત્માતણી પ્રગટ્યા વિના રહેશે નહીં. ૩૫૫

૮૩૮ મુનિરાજનો નિવાસ ચેતન દેશમાં નિત હોય છે;
ઉપયોગ તીખો થઈ જતાં ઊંડી ગુફામાં જાય છે. ૩૫૬

૮૩૯ જો બહારમાં તે આવતા મડદાં સમ દશા ત્યાં હોય છે;
ના દેહમાં કંઈ રાગ છે, શાંતિનો સાગર પ્રગટ છે. ૩૫૬

૮૪૦ ચૈતન્યની પર્યાયમાં તરંગ વિધવિધ ઉછળે;
છે જ્ઞાનમાં કુશળ અને પ્રબળ દર્શન સદા રહે. ૩૫૬

૮૪૧ વેદન સદા સમાધિનું અંતરમહીં તૃપ્ત રહે;
વીતરાગની મૂર્તિ સમા તે પરિણમી ગયા હોય છે. ૩૫૬

૮૪૨ મુનિરાજના છે શરીરમાં વીતરાગ દશા છવાઈ ગઈ;
જિન છે નહીં, પણ મુનિ ખરે જિન સરખાં જ છે સહી. ૩૫૬

૮૪૩ જીવ એકલો જન્મે સદા, જીવ એકનું મૃત્યુ, અરે !
જીવ એકલો પરિભ્રમણ કરે, જીવ એકલો મુક્તિ લહે. ૩૫૭

૮૪૪ ના સાથ છે ત્યાં કોઈનો ભ્રમણા થકી આશ્રય ગણે;
બ્રહ્માંડમાં ભમતા જીવો છે એટલાં મરણો કરે. ૩૫૭

૮૪૫ તે મરણના દુઃખે કરી માતાતણાં આંસુ વહ્યા;
તે એકઠાં જો થાય તો સમુદ્રો ભરાય સામટા. ૩૫૭

૮૪૬ ભવ પરિવર્તને માંડ આ માનવ જનમ છે સાંપડયો;
ને જોગ આ ઉત્તમ મહા છે માંડ માંડ સાંપડયો. ૩૫૭

૮૪૭ તેમાં અરે ! આત્માતણું હિત સાધવાનું ટાણું આ;
મોતી પરોવી લો હવે ઝબકારથી વીજળીતણાં. ૩૫૭

૮૪૮ આ ભવ ને સંયોગ સહુ ઝબકાર સમ ચાલ્યા જશે;
દુઃખી થયો તું એકલો સુખ મુક્તિનું લે તું એકલો. ૩૫૭

૮૪૯ ગુરુદેવ તો માર્ગ ઘણો સ્પષ્ટ કરી બતલાવતા;
આચાર્ય માર્ગ પ્રકાશતા તે સ્પષ્ટ કરી બતલાવતા. ૩૫૮

૮૫૦ પેંથી દરેક તેલ નાખે, ઝીણવટ કરી સમજાવતા;
ગુરુદેવ મારગ જ્ઞાનનો હસ્તમહીં દેખાડતા. ૩૫૮

૮૫૧ ચોળી કરીને માલ તે તૈયાર કરીને આપતા !
'લે ખાઈ લે' કહી આપતા, ખાવા હવે તૈયાર થા ! ૩૫૮

૮૫૨ ના નાશ છે, ન મલિન થતું, ઊણપ નહીં, ભિન્ન સદા—
એ દેહથી, એ તત્ત્વને ઉપસર્ગ ના અડતાં કદા. ૩૫૯

૮૫૩ તરવાર પણ ના છેદતી, અગ્નિ નહીં છે બાળતો;
રાગાદિથી વિકારી ના, કાળ અનંતથી એવો રહ્યો. ૩૫૯

૮૫૪ કો ઓળખે ના ઓળખે તે તો સદા એવું રહે;
મુનિ, સુદૃષ્ટિ, હૃદય કમળ સિંહાસને બિરાજશે. ૩૫૯

૮૫૫ સુદૃષ્ટિને પુરુષાર્થ વિણ ના કાળ કોઈ હોય છે;
તે દોર ચાલુ હોય છે, હઠથી નહીં, તે સહજ છે. ૩૫૯

૮૫૬ દૃષ્ટિ થઈ તે એક બાજુ પડી રહે, ના એમ છે;
'અગ્નિ પડયો ઢાંકેલ' જેવું દૃષ્ટિમાં ના હોય છે. ૩૬૦

૮૫૭ જ્ઞાતાતણી ધારા પ્રગટનું વેદન અંદર હોય છે;
ધારા ટકે પુરુષાર્થથી, તત્ત્વ અવિચળ છે રહે. ૩૬૦

૮૫૮ પ્રતિકૂળતાના ગંજ હો, બ્રહ્માંડ આખું ખળભળે;
પણ પરિણતિ ડોલે નહીં, એવી દશા સહજ જ રહે. ૩૬૦

૮૫૯ જ્ઞાયક સ્વરૂપી તુજ થકી બીજું બધું છૂટું જ છે;
એકત્વ બુદ્ધિ તે કરી તે માત્ર તારી ભૂલ છે. ૩૬૧

૮૬૦ શરીરાદિ ના, વાણી નહીં, વિભાવ ભાવો મુજ નથી;
સિદ્ધ સમાન સ્વરૂપ મુજ શ્રદ્ધા કરે યથાર્થ તું. ૩૬૧

૮૬૧ 'શુભભાવથી મુક્તિ થશે શુભભાવ ચાલ્યા જાય તો—
જાશે બધું, શુન્ય બનું'— શ્રદ્ધા તું એવી છોડજે. ૩૬૧

૮૬૨ અનંત સ્વાભાવિક શક્તિથી ભરેલ પદાર્થ તું;
શ્રદ્ધા કરી આગળ વધે એ માર્ગથી મુક્તિ મળે. ૩૬૧

૮૬૩ અજ્ઞાનીને 'હું શરીર છું, આ શરીર મુજ' રહ્યાં કરે;
છે સહજ, એ ના ગોખવું કે યાદ કરવું ના પડે. ૩૬૨

૮૬૪ તો જ્ઞાનીને 'જ્ઞાયક જ હું ના અન્ય કંઈ મારું ખરે'
છે સહજ એ ના ગોખવું કે યાદ કરવું છે પડે. ૩૬૨

૮૬૫ આશ્ચર્યકર ઋદ્ધિ ભર્યાં મહેલે ઘણું જોવાનું છે;
મુનિરાજ ચેતન લોકમાં નિવાસ કરી અવલોકતા. ૩૬૩

૮૬૬ આનંદરૂપ સ્વાદિષ્ટ ભોજનથાળ જ્યાં ભરેલ છે;
મુનિરાજ એ ભોજન જમે સમરસમય દશા એ હોય છે. ૩૬૩

૮૬૭ શાસ્ત્રતણાં રહસ્યો બધાં ઉકેલી સત્ય શોધન કર્યું;
સ્પષ્ટ કરી ગુરુ મૂકતાં ના ગોતવા જાવું પડયું. ૩૬૪

૮૬૮ ગુરુદેવનો પ્રતાપ કોઈ અદ્‌ભૂત છે અહો મહા !
‘આત્મા’ શબદ બોલતાં થયાં તે તેમનો પ્રતાપ છે. ૩૬૪

૮૬૯ ‘ચેતન્ય છું’, ‘જ્ઞાયક સદા’ ગુરુ પ્રતાપથી જાણી શકયા;
દુર્લભ હતી જે વાત તે ભેદજ્ઞાન ધોધ વરસાવતા. ૩૬૪

૮૭૦ ગુરુદેવ ઝાલી હાથને જાણે બધું શીખવી રહ્યાં;
પુરુષાર્થથી શીખી જવું, અવસર ચૂકવો યોગ્ય ના. ૩૬૪

૮૭૧ જીવ–કાળ સૌ અનાદિ છે, જીવે ન બે પ્રાપ્ત કર્યાં;
જિનરાજ સ્વામી ના મળ્યા, સમકિત તણી પ્રાપ્તિ નહીં. ૩૬૫

૮૭૨ જિનરાજ સ્વામી તો મળ્યા પણ તેમને ના ઓળખ્યા;
તેથી મળ્યા, પણ ના મળ્યા બરાબર જ તેને જાણવા. ૩૬૫

૮૭૩ અંદરમહીં જાતો નથી ન નવીનતા પ્રાપ્ત કરે;
શુભ–અશુભ એક જ પોષતો તો પણ નહીં રે !થાક છે. ૩૬૫

૮૭૪ તે અશુભમાંથી શુભ વળી જાય શુભમાંથી અશુભમાં;
શુભભાવથી જો મુક્તિ તો તે કયારની પ્રાપ્ત થતી. ૩૬૫

૮૭૫ વિશ્વાસ છોડી શુભતણો તે નવીન ભાવોને કરે;
સમ્યક્ પરિણતિ જો કરે શાશ્વત સુખ તો તે વરે. ૩૬૫

૮૭૬ જે આતમાને ઓળખે ને અનુભવે તો સમીપ છે–
આત્મા સદા, પર્યાયમાં સૌ શુદ્ધાત્મા જ મુખ્ય રહે. ૩૬૬

૮૭૭ શુભભાવ આવે પણ કદી શુદ્ધાત્મ ના ભૂલાય છે;
એ સમયમાં પણ શુભભાવો મુખ્યપણું ના પામશે. ૩૬૬

૮૭૮ મુનિરાજ પંચાચારમાં, વ્રત નિયમાદિ શુભ ભાવમાં—
ભેદજ્ઞાન ધારા ને સદા શુદ્ધ ચારિત્ર દશા ચાલુ રહે. ૩૬૬

૮૭૯ શુભભાવ તો નીચા રહે આત્મા જ ઊર્ધ્વ છે રહે;
છે બધુંય પાછળ રહી જતું, શુદ્ધાતમા આગળ રહે. ૩૬૬

૮૮૦ જિનવાણીમાં અતિષય ઘણાં રહસ્યો અનંતા આવતા;
તે વાણીથી જીવો ઘણાં છે મોક્ષ મારગ પામતા. ૩૬૭

૮૮૧ આખુંય ચેતન તત્ત્વ તો પણ વાણીમાં ના આવતું;
અદ્‌ભુત, અનુપમ, તત્ત્વની સ્વાનુભવ થકી ઓળખ થતી. ૩૬૭

૮૮૨ પંચેન્દ્રિય ને માનવપણું, ઉત્તમકુળ છે દુર્લભ ઘણું;
સત ધર્મનું શ્રવણ ઉત્તરોત્તર છે દુર્લભ ઘણું. ૩૬૮

૮૮૩ ગુરુદેવ સાતિષય જ્ઞાનધર પુરુષાર્થ પ્રેરક વાણીનો;
છે યોગ કાળ અનંતમાં પુણ્યોદયે પ્રાપ્ત થયો. ૩૬૮

૮૮૪ પ્રમાદ તજ, પુરુષાર્થનો સુયોગ છે પ્રાપ્ત બહું;
લઈ લાભ, થા સાવધ, કરી ઓળખ, ભ્રમણને ટાળ તું. ૩૬૮

૮૮૫ જડ શરીર છે ના ચેતને, ભવનો પરિચય પણ નહીં;
શુભ—અશુભમાં પરિણતિ નહીં, એ સૌ તણો સન્યાસ છે. ૩૬૯

૮૮૬ અનંતભવ પરિણમનમાં ગુણો હીણા વિપરીત રૂપે—
પરિણમ્યા પણ મૂળ તત્ત્વને ગુણો રહ્યાં એવા જ છે. ૩૬૯

૮૮૭ જ્ઞાનગુણ હીણો પરિણમે સામર્થ્યમાં ઉણપ નહીં—
આનંદનો અનુભવ નહીં, પણ હણાઈ, ઘસાઈ ગયો નથી. ૩૬૯

૮૮૮ ભમતો અનાદિકાળ, પણ શક્તિરૂપે એમ જ બધું—
જાણે ભલે ઓછું ઘણું, આકુળતા મહીં રોકાય તે— ૩૬૯

૮૮૯ તો પણ દ્રવ્ય—ગુણો બધાં સ્વયમેવ સચવાયેલ છે;
ના સાચવવાં પડતાં કદી એવી પ્રતીતિ હોય છે. ૩૬૯

૮૯૦ આત્માનું કરવું હોય તો ધ્યેય આગળ રાખવું;
‘કાર્યો’ તણી ગણતરી નહીં, ધ્યેય જ મુખ્ય ત્યાં રાખવું. ૩૭૦

૮૯૧ પ્રવૃત્તિરૂપ 'કાર્યો' બધાં ભૂમિકા પ્રમાણે થાય છે;
આત્મા કરીને મુખ્ય, જ્ઞાની 'ક્રિયા' થાય તે જોયા કરે. ૩૭૦

૮૯૨ ને તેમના સહુ કાર્યમાં 'આત્મા સમીપ છે જેહને'
ના ધ્યેયને ભૂલે કદી એવું સદાયે હોય છે. ૩૭૦

૮૯૩ સ્વપ્ન સુખડીથી કદી છે ભૂખ તો ભાંગે નહીં;
ના ઝાંઝવાના જળ થકી રે ! તરસ તો છીપતી કદી. ૩૭૧

૮૯૪ તેમજ પર સૌ પદાર્થથી સુખી કદી ન થવાય છે;
સુખી થવા ઉપાય આ વિશ્વાસ કર તેનો સદા. ૩૭૧

"આમાં સદા પ્રીતિવંત બન, આમાં સદા સંતુષ્ટ ને–
આનાથી બન તું તૃપ્ત, તુજને સુખ અહો ! ઉત્તમ થશે."

૮૯૫ પાતાળ કૂવો ખોદતા પથ્થર પડ તૂટી જશે;
કાણું પડી પાણી ઊડે ત્યારે જોર ખ્યાલે આવશે. ૩૭૨

૮૯૬ ત્યમ સૂક્ષ્મ ઉપયોગથી ઊંડાણમાં તળિયાં સુધી;
પહોંચી સમકિત સાધતા ત્યાં શુદ્ધતા આંશિક ફૂટે. ૩૭૨

૮૯૭ પર્યાયને તે વેદતાં અંદર અનંત સામર્થ્ય જે;
તે અનુભવમાં સ્પષ્ટ ખ્યાલ મહીં તે આવશે. ૩૭૨

૮૯૮ 'તાળાં બધાંની ચાવી આ અભ્યાસ જ્ઞાયકનો કરો;'
એના થકી તાળાં બધાં ખૂલી જશે તૂરત જ અહો ! ૩૭૨

૮૯૯ સંસાર કારાગાર છૂટી મુક્તિપુરી જાવું હોય તો;
જ્ઞાયક અભ્યાસની ચાવી થકી રાગાદિ તાળાં ખોલતો. ૩૭૩

૯૦૦ શુભની રુચિ ભવની રુચિ છે, મોક્ષની રુચિ છે નહીં;
સંતોષ મંદ કષાયમાં અકષાયને પામે નહીં. ૩૭૪

૯૦૧ ગુરુદેવ પોકારી કહે આશ્રય કરી જ્ઞાયક તણો;
શુદ્ધ થવું તે એક પદ બાકી બધું અપદ ખરે. ૩૭૪

૯૦૨ ઓળખ કર ચૈતન્ય તત્ત્વની, અભ્યાસ પણ જ્ઞાયકતણો;
એક જ ખરું કર્તવ્ય છે– અભ્યાસ ભેદજ્ઞાનતણો. ૩૭૫

૯૦૩ અભ્યાસ એ કરતાં જતાં જો આતમા રાગાદિથી–
ભિન્ન પડે તો નિજતણું સ્વરૂપ પ્રાપ્ત થાય છે. ૩૭૫

૯૦૪ ‘હું કરી શકું છું પરતણું’ એ જીવનો છે ભ્રમ રહે;
સ્વતંત્ર છે સૌ દ્રવ્ય, ના પરનું કશું પણ કરી શકે. ૩૭૫

૯૦૫ જાણનાર છે પોતે સદા ને છે વળી જ્ઞાયક સદા;
પરમાં ન જ્ઞાન જાય છે, પરમાંથી ના આવે કશું. ૩૭૫

૯૦૬ એ સમજવા દેવાદિના બાહ્ય નિમિત્તો હોય છે;
દર્શનાદિ જે પ્રગટ થતાં નિજમાંથી પ્રગટ તે થાય છે. ૩૭૫

૯૦૭ મૂળ તત્ત્વની ઓળખ કરો બાહ્યમહીં બહુ બહુ કર્યું;
શુભભાવની ક્રિયા કરી શુભભાવને ધરમ ગણી. ૩૭૫

૯૦૮ પણ ધરમ તો શુદ્ધભાવમાં શુભને વિભાવ જ જાણવો;
આકુળતા–દુઃખરૂપ સદા શાંતિ નથી કયાંયે જરા. ૩૭૫

૯૦૯ શુભભાવ ના આવ્યા વિણ રહે તો પણ ન શાંતિ ત્યાં જરા;
શાંતિ અને સુખથી ભર્યું આનંદરૂપ છે આતમા. ૩૭૫

૯૧૦ ઓળખ કરી, પ્રયાસ ઠરવાનો કરે શ્રેયરૂપ છે;
તે એક છે, કરવા સમું, હિતરૂપ–કલ્યાણ સ્વરૂપ છે. ૩૭૫

૯૧૧ પૂર્ણ ગુણે અભેદ એવા પૂરણ આતમ દ્રવ્ય પરે–
દૃષ્ટિ કરે, આલંબશે તો પૂર્ણતા પ્રગટ થશે. ૩૭૬

૯૧૨ એ અખંડ આલંબન, પરમ પારિણામિક આલંબન ખરે;
તેથી થતી ઔપશમાદિક પર્યાયોનું વેદન હોય છે. ૩૭૬

૯૧૩ ના જોર છે તેના પરે, આલંબન ન તેનું હોય છે;
ને જોર છે સદાય તેનું અખંડ–શુદ્ધ પર હોય છે. ૩૭૬

૯૧૪ ક્ષાયિક પણ આશ્રય નહિ, આલંબન ન તેનું હોય છે;
કારણ કે તે તો અરે ! પર્યાય–વિશેષ ભાવ છે. ૩૭૬

૯૧૫ સામાન્યના આશ્રયથકી શુદ્ધ–વિશેષ પ્રગટ થશે;
એ ધ્રુવનાં આલંબને જ નિર્મળનો ઉત્પાદ છે. ૩૭૬

૯૧૬ છોડી બધું, શુદ્ધાત્મ પરમ પારિણામિક ભાવમાં–
દૃષ્ટિ કરી, નિત જોરથી ઉપયોગ તેમાં વાળજે. ૩૭૬

૯૧૭ સ્વભાવમાંથી આનંદ પ્રગટાવવા મુનિ જંગલમાં વસ્યા;
નિરંતર પરમ પરિણામિકે છે તેમને લીનતા સદા. ૩૭૭

૯૧૮ દિનરાત રોમેરોમમાં આત્મા જ રમી રહ્યો સદા;
છે શરીર, ના તેની પડી, દેહાતીત જેવી છે દશા. ૩૭૭

૯૧૯ ઉત્સર્ગ કે અપવાદની મૈત્રીપૂર્વક રહેનાર છે;
પોષણ કરી આત્માતણું વિભાવભાવનું શોષણ કરે. ૩૭૭

૯૨૦ મુશ્કેલીમાં વધુ જોરથી બાળક માત છેડો પકડતો;
ઉપસર્ગે વધુ પુરુષાર્થથી નિજાત્મને મુનિ વળગતો. ૩૭૭

૯૨૧ આવી પવિત્ર મુનિદશા કયારે અહો પ્રાપ્ત થશે ?
એવા મનોરથ સમકિતીને છે સદાય વર્તી રહે. ૩૭૭

૯૨૨ સ્વભાવનો મહિમા થયો વિષય મહિમા તૂટી જશે;
તુચ્છતા ત્યાં લાગશે કષાયનો મહિમા જશે. ૩૭૮

૯૨૩ સમજણમહીં નિમિત્તભૂત દેવાદિ મહિમા આવશે;
કાર્ય ગમે તે કરતાં થકા સ્વભાવ પ્રાપ્તિની ખટક રહે. ૩૭૮

૯૨૪ ગૃહસ્થાશ્રમે પણ જ્ઞાનીને શુભ–અશુભથી જુદાં સદા;
જ્ઞાયકને અવલંબનારી જ્ઞાતૃત્વ ધારા વર્તશે. ૩૭૮

૯૨૫ પુરુષાર્થની નબળાઈથી અસ્થિરરૂપ વિભાવ છે;
તેથી ગૃહસ્થાશ્રમમયી શુભાશુભ પરિણામો હોય છે. ૩૭૮

૯૨૬ સ્વરૂપ સ્થિર ન રહી શકે શુભ વિવિધ ભાવો આવતા–
'હો દેવ ગુરુની સમિપતા ગુરુ ચરણ કમળ સેવા હજો.' ૩૭૮

૯૨૭ ઈત્યાદી પ્રકારે ભકિતના સ્તવન, પૂજન, સેવાતણાં;
સ્વાધ્યાય, ધ્યાન, અણુવ્રતાદિ શુભભાવ હઠ વિના બને. ૩૭૮

૯૨૮ આ બધાય જે ભાવો કહ્યાં–દરમ્યાન જ્ઞાતૃત્વ તણી–
પરિણતિની ધારા તો, અહા ! સતત ચાલુ છે રહી. ૩૭૮

૯૨૯ નિજ સ્વરૂપમાં રમનાર એ મુનિરાજને પણ પૂર્ણ તે—
વીતરાગદશા અભાવમાં શુભઅશુભ ભાવો હોય છે. ૩૭૮

૯૩૦ વ્રતો મહા, મૂળગુણ ને આચાર સ્વાધ્યાયાદિના—
વળી ધ્યાન ઈત્યાદિ સંબંધી શુભભાવો આવતા. ૩૭૮

૯૩૧ ભક્તિ જિનેન્દ્ર—ગુરુ—શ્રુતની, ઉલ્લાસમય ભાવે કહે—
'જિનેન્દ્ર તુજ ચરણ કમળો પ્રાપ્ત થતાં શું ના મળે ?' ૩૭૮

૯૩૨ 'જો આપ મુજને મળી ગયા સઘળુંય તો છે મળી ગયું';
એ રીત પદ્મનંદી મુનિ ભક્તિના ધોધ વહાવતા. ૩૭૮

૯૩૩ આવા અનેક પ્રકારના શુભભાવ હઠ વિના રહે;
સાથેજ જ્ઞાયક આલંબને જ્ઞાતૃત્વ ધારા ચાલશે. ૩૭૮

૯૩૪ સાધકમુનિ—સમકિતીને શુભભાવ જે આવે બધા;
જ્ઞાતૃત્વ પરિણતિ વિરુદ્ધ તેથી દુઃખરૂપ તે વેદાય છે. ૩૭૮

૯૩૫ તે હેયરૂપ જણાય છે આકુળતારૂપ હોય છે;
તો પણ ભૂમિકાનુસારે આવ્યા વિના તે ના રહે. ૩૭૮

૯૩૬ સાધક દશા ત્રિપટી કહી છે એક આશ્રય જ્ઞાયકે;
શુદ્ધાત્મ જોર નિરંતરે શુદ્ધાશુદ્ધ અંશ ઉપેક્ષિત છે. ૩૭૮

૯૩૭ બીજો શુદ્ધ છે જે અંશ તે સુખરૂપે વેદાય છે;
ત્રીજો અશુદ્ધાંશ કહ્યો શુભભાવ દુઃખ—ઉપાધિ જે. ૩૭૮

૯૩૮ સાધકને શુભભાવ તો ઉપાધિરૂપ જણાય છે;
હઠપૂર્વક તે ના હોય છે, સહજ દશાના તે હોય છે. ૩૭૮

૯૩૯ 'આ ભાવ જો હું નહીં કરું તો પરભવમહીં દુઃખો સહું;'
અજ્ઞાની સમ ના ભય સહિત ના કષ્ટપૂર્વક હોય છે. ૩૭૮

૯૪૦ તો પણ નહીં સુખરૂપ ગણે—શુભભાવ સાથે વર્તતી—
જ્ઞાયકને અવલંબનારી પરિણતિને સુખરૂપ ગણે. ૩૭૮

૯૪૧ દેખાવના વળી ચાવવાનાં દાંત હાથીને જુદા;
તે રીત જુદો હોય છે સાધક શુભ પરિણામમાં. ૩૭૮

૯૪૨ અંતરમહીં શાંતિ વળી તૃપ્તિ જુદાં શુભભાવથી;
બાહ્ય ક્રિયા આધારથી ઓળખાય ના અંતર કદી. ૩૭૮

૯૪૩ ઉત્કૃષ્ટ નિજ આતમા, આનંદ–રસ ભરપૂર છે;
ગુણમણિતણાં ભંડારની ઓળખ કરજે તું હવે. ૩૭૯

૯૪૪ દિવ્ય સ્વરૂપી આતમાની દિવ્યતા ના ઓળખે;
મૂલ્ય કરી પર ચીજનું પ્રાપ્ત કરવા તું મથે. ૩૭૯

૯૪૫ પરવસ્તુ ના ત્રણ કાળમાં કદી કોઈની થાતી, અરે !
ભ્રમણા કરી તું મથી રહ્યો, તારું બૂરું ત્યાં થાય છે. ૩૭૯

૯૪૬ ના કાટ કંચનને કદી, ઊધઈ અગ્નિને નહીં;
સ્વભાવમાં આવરણ ના, ઊણપ, અશુદ્ધિ ના આવતી. ૩૮૦

૯૪૭ તું ઓળખી તેને સદા, તું લીન થાજે તે મહીં;
તો તુજ સર્વ ગુણરત્નોની ચમક પ્રગટ થતી. ૩૮૦

૯૪૮ શાસ્ત્રો ભણે, વિવાદ પણ પ્રમાણ–નય–નિક્ષેપાદિમાં–
તર્કો કરે, વળી ધારણારૂપ જ્ઞાન ને વિચારમાં– ૩૮૧

૯૪૯ વિશેષ કરીને ફેરવે પણ જ્ઞાન સ્વરૂપી આત્મના–
અસ્તિત્ત્વને પકડે નહીં ને તે રૂપે ના પરિણમે– ૩૮૧

૯૫૦ તો તે રહે જ્ઞેય નિમગ્ન, જાણી બહારનું તલ્લીન બને;
એ જ્ઞાન બહારથી આવશે એવો ભાવ તે વેદ્યા કરે. ૩૮૧

૯૫૧ ભણ્યો બહુ, યુક્તિ–ન્યાયના વિચારો બહુ કર્યા;
જાણનારને જાણ્યો નહીં, મૂળ ભૂમિ તો દેખાય ના. ૩૮૧

૯૫૨ તો તે બધું જાણ્યું ન જાણ્યું, ફળ કશું ના આવશે;
શાસ્ત્રાદિનું પ્રયોજન રહે– જ્ઞાન સ્વરૂપીને તું જાણજે. ૩૮૧

૯૫૩ ઉત્પાદ–વ્યય–ધ્રુવરૂપ છો, કાયમ રહી પલટી રહ્યો;
કાયમ રહે સ્વરૂપ તુજ, ખાલી નથી ભરેલ છો. ૩૮૨

૯૫૪ અનંત ગુણ રત્નોતણાં જ્યાં ઓરડા ભરેલ છે;
તે અદ્‌ભૂત ઋદ્ધિ યુક્ત તુજ સ્વરૂપ દૃષ્ટિ કર હવે. ૩૮૨

૯૫૫ સંતોષ તો થાશે તને 'હું તો સદા કૃતકૃત્ય છું.'
તેમાં ઠરે, પર્યાયમાં થાશે પછી કૃતકૃત્ય તું. ૩૮૨

૯૫૬ નિર્ણય જ્ઞાયકનો કરી, મતિ શ્રુતનાં ઉપયોગને–
જે જાય છે બહારમાં અંદર મહીં જ સમેટજે. ૩૮૩

૯૫૭ બહાર જતાં ઉપયોગને જ્ઞાયક અવલંબન વડે;
બહુવાર અંદર સ્થિર કરે તે શિવપુરીનો માર્ગ છે. ૩૮૩

૯૫૮ અનુભૂતિ જે જ્ઞાયકતણી શિવપુરીની તે સડક છે;
છે તે જ મારગ મોક્ષનો, બીજા વર્ણનનાં પ્રકાર છે. ૩૮૩

૯૫૯ નિધાન ઠસોઠસ ભરેલ છે અનંત ગુણ નિધાનમાં;
અનંત ગુણો પ્રદેશ અસંખ્યાત પ્રદેશમાં જ ભરેલ છે. ૩૮૪

૯૬૦ નિધાન આવા તુજમહીં તું બહાર લેવા જાય છે;
તારામહીં તો જો જરી, તારામહીં શી ખામી છે? ૩૮૪

૯૬૧ સુખ પૂર્ણ છે, જ્ઞાન પૂર્ણ છે, તારામહીં જ બધું જ છે;
કો ચીજ ન બહારથી લેવા જવી તારે પડે. ૩૮૪

૯૬૨ પ્રવેશકર અંદર બધું સમકિત થતાં દેખાય છે;
નિધાન તુજ જે પ્રગટ અંશને વેદીને તુ તૃપ્ત થશે. ૩૮૪

૯૬૩ પુરુષાર્થ ચાલુ રાખજે નિધાનનો ભોકતા થતાં–
તું સદા એ નિધાનથી તૃપ્ત તૃપ્ત થઈ જશે. ૩૮૪

૯૬૪ કાળ અનંત, વાર અનંત તે કર્યું બધું, નહીં ઓળખે–
ગુરુદેવ જે કંઈ પણ કહે જિજ્ઞાસા થકી તે સાંભળે. ૩૮૫

૯૬૫ વિચાર કરી, નક્કર ભૂમિ અસ્તિત્ત્વને ખ્યાલે ધરે–
સ્વરૂપમાં લીનતા કરે તો ઓળખ આત્માની થશે. ૩૮૫

૯૬૬ સિવાય તે જો બહારમાં તું જેટલા ફાંફા કરે;
તે વ્યર્થ છે ને ફોતરાં ખાંડયાં અરે ! સમાન છે. ૩૮૫

૯૬૭ ક્રિયા બહારની હોય તે માર્ગ નહીં દેખાડશે–
જો સાચી સમજણ હોય તો માર્ગની સમજણ થાય છે. ૩૮૬

૯૬૮ પ્રત્યક્ષ ગુરુ ઉપદેશ ને પરમાગમોનું જ્ઞાન જે—
પ્રયોજનભૂત હોય તે માર્ગ પ્રાપ્તિમાં નિમિત્ત છે. ૩૮૬

૯૬૯ ચૈતન્યને સ્પર્શી આવતી વાણી હૃદયમાં ઉતરતી;
રુચિપૂર્વક જીવ જો સાંભળે સમકિત નજદિક લઈ જતી. ૩૮૬

૯૭૦ આત્મા અજાયબ ઘર તહીં અનંત ગુણ અજાયબી;
આશ્ચર્ય કર જોવા બધું ભરેલ અજાયબ ઘર મહીં. ૩૮૭

૯૭૧ ન બહારમાં કંઈ છે જરી અવલોકન તું તેનું કરે;
કર ડોકિયું એક વાર તું આનંદ અપૂર્વ પ્રગટ થશે. ૩૮૭

૯૭૨ નીકળવું ગમે ન બહારમાં ને વસ્તુ સહુ બહાર જે;
આશ્ચર્ય તૂટી જાય ત્યાં વિરક્ત તું પરથી થશે. ૩૮૭

૯૭૩ મુનિરાજને શુદ્ધાત્મના અવલંબને સંયમ રહે;
બ્રહ્માંડ ફરી જાય પણ સંયમ પરિણતિ ના ફરે. ૩૮૮

૯૭૪ મુનિ સાધના અર્થે વન—જંગલે એકલ વસે;
અંદરમહીં જોતાં મુનિ સ્વરૂપ નગરી એ વસે. ૩૮૮

૯૭૫ જોતાં બહાર ક્ષુધા, તૃષા, ઉપવાસી તેઓ લાગતા;
અંદરમહીં જોતા મુનિ મધુર રસને આસ્વાદતા. ૩૮૮

૯૭૬ જોતાં બહાર ચારે તરફ ઘનઘોર અંધારું ભલે;
અંદરમહીં જોતાં મુનિને જ્ઞાનનો અભ્યાસ છે. ૩૮૮

૯૭૭ જોતાં બહાર તાપે પ્રખર મુનિ ધ્યાન કરતા હોય છે;
અંદર મુનિ સંયમરૂપી કલ્પવૃક્ષ છાંય વિરાજશે. ૩૮૮

૯૭૮ ઉપસર્ગમાં તો મુનિ કહે—'સ્વરૂપની સ્થિરતાતણો—
કરવા અખતરો મોકો મળ્યો ઉપસર્ગ તો મુજ મિત્ર છે.' ૩૮૮

૯૭૯ અંતરંગમાં મુનિરાજની અંતરદશા અદ્‌ભૂત છે;
ને દેહમાં ઉપશમતણાં ઢાળા ઢળી ગયા હોય છે. ૩૮૮

૯૮૦ દ્રવ્યદૃષ્ટિ પ્રગટ ત્યાં દૃષ્ટિતણાં જોરે કરી—
ચૈતન્ય જ્ઞાયક ભાસતો દેહાદિ કંઈ ભાસે નહીં. ૩૮૯

૯૮૧ ત્યાં ભેદજ્ઞાન પરિણતિ એહવી દૃઢ થઈ જાય છે;
કે સ્વપ્નમાં પણ આતમા દેહાદિથી જુદો થશે. ૩૮૯

૯૮૨ દિન રાત જ્ઞાયક ઊંઘમાં કે જાગતા નિરાળો રહે;
જે છે નિરાળો તો સદા પ્રગટ નિરાળો થઈ જાય છે. ૩૮૯

૯૮૩ તેને ભૂમિકાનુસારનું બાહ્યવર્તન હોય છે;
સંયોગ હો કો જ્ઞાન ને વૈરાગ્ય તો જુદા રહે. ૩૮૯

૯૮૪ હું જ્ઞાયક જ તે જ્ઞાયક છું, નિઃશંક જ્ઞાયક હું સદા;
વિભાવ–હું ના એક કદી, બ્રહ્માંડ ફરે તો પણ છૂટાં. ૩૮૯

૯૮૫ એ અચળ નિર્ણય હોય છે અનુભવમહીં નિઃશંકતા;
ઊર્ધ્વપણે જ્ઞાયક રહે બીજું બધું નીચે સદા. ૩૮૯

૯૮૬ મુનિ સમાધિ પરિણમત સુખ પ્રગટાવવા ઉત્સુક છે;
તે સકળવિમળ કેવળજ્ઞાન ને દર્શનતણાં લોલુપ છે. ૩૯૦

૯૮૭ ક્યારે જમવટ થાય ને શ્રેણી થકી વીતરાગતા ?
ક્યારે અવસર આવશે જામે રમણતા, કેવળ મળે ? ૩૯૦

૯૮૮ એ ધ્યાન ક્યારે જામશે? શાશ્વત સ્વભાવે રહું;
આવી સદા મુનિરાજને છે ભાવના વર્તી રહે. ૩૯૦

૯૮૯ નિજ આશ્રયે એકાગ્ર થઈ કેવળ સમીપ જઈ રહ્યાં;
શાંતિ ઘણી વેદાય છે, મંદ કષાય થઈ જાય છે. ૩૯૦

૯૯૦ ઋદ્ધિ–ચમત્કારો પ્રગટ પણ તેમનું દુર્લક્ષ છે;
ના ચમત્કારો બાહ્યના, ચૈતન્યના છે જોઈએ; ૩૯૦

૯૯૧ સાધનરૂપે નિર્વિકલ્પ–ધ્યાન–સમાધિ જોઈએ;
પરિણામરૂપ પ્રદેશમાં ગુણ પૂર્ણ રૂપે પ્રગટશે. ૩૯૦

૯૯૨ ચૈતન્ય વિલાસ પ્રગટશે એ ભાવનાને આત્મમાં–
અત્યંત લીનતા થકી મુનિરાજ છે સફળ કરે. ૩૯૦

૯૯૩ અજ્ઞાનીઓ અનાદિથી સમૃદ્ધિથી ભરેલ નિજ–
ચૈતન્ય મહેલ તાળાં દઈ રખડ્યાં કરે બાહ્ય સદા. ૩૯૧

૯૯૪ એ જ્ઞાન શોધે બહારમાં આનંદ પણ શોધે તહીં;
છે શોધી બધે જ બહારમાં ભગવાન પણ ભિક્ષુક બને. ૩૯૧

૯૯૫ ને જ્ઞાની ચેતન મહેલના તાળા ખોલી નાખેલ છે;
અંદરમહીં જ્ઞાનાદિની સમૃદ્ધિ અખૂટ દેખીને– ૩૯૧

૯૯૬ થોડી વળી તે ભોગવી સમૃદ્ધિ, પૂર્વે કદી નહીં–
અનુભવી હતી એવી નિરાંત તેને થઈ ગઈ. ૩૯૧

૯૯૭ ઉત્કૃષ્ટ–આશ્ચર્યકર નહીં વિભૂતિ આ વિશ્વની–
ઊંચી જ કો, તે તું જ છો, ચૈતન્ય ચીજ પાસે રહી. ૩૯૨

૯૯૮ ઉપસર્ગ કે શરીર છૂટવા પ્રસંગમાં કાં ડર તને?
બાધા પંહોચે પુદ્‌ગલે, છૂટી જતું તે તુજ નથી. ૩૯૨

૯૯૯ આશ્ચર્યકર મંગળકારી તત્ત્વ તું, શાને ડરે ?
સમાધિમાં સ્થિરતા કરી, તું ધ્યાન કર ભય છોડીને. ૩૯૨

૧૦૦૦ ભવભ્રમણ છૂટવું હોય તો પરથી ભિન્નતા નકકી કરી;
સ્વભાવનો મહિમા કરી સમકિત પ્રયાસ સાધવો. ૩૯૩

૧૦૦૧ જો ધ્રુવ જ્ઞાયકભૂમિનો આશ્રય નહીં તો જીવ આ–
રે ! સાધનાનું બળ કોના આશ્રયે પ્રગટ કરે? ૩૯૩

૧૦૦૨ જ્ઞાયકતણી ધ્રુવ ભૂમિમાં જો દૃષ્ટિ જામી જાય તો;
એકાગ્રતા પ્રયત્નથી નિમર્ળતા પ્રગટ થતી. ૩૯૩

૧૦૦૩ સાધકતણી દૃષ્ટિ નિરંતર શુદ્ધાત્મ ઉપર હોય છે;
તો પણ તે જાણે બધી શુદ્ધાશુદ્ધ સૌ પર્યાયને. ૩૯૩

૧૦૦૪ તે જાણતાં વિવેક છે સ્વભાવ–વિભાવપણાંતણો;
સુખ–દુઃખરૂપ વેદનતણો, સાધક અને બાધકતણો. ૩૯૩

૧૦૦૫ સાધકપણે તે યોગ્ય બહુ પરિણામ વર્તતા હોય છે;
‘પરિપૂર્ણ છું’ બળ એહવું સતત છે સાથે રહે. ૩૯૩

૧૦૦૬ પુરુષાર્થરૂપ ક્રિયા બધી પર્યાયમાં તે જાણતો;
દૃષ્ટિ વિષયભૂત નિષ્ક્રિય દ્રવ્ય અધિક–અધિક રહે. ૩૯૩

૧૦૦૭ સાધક પરિણતિ અટપટી એ રીત જ્ઞાની સમજતો;
બીજા બધાંને સમજવું અઘરું બહુ એ લાગશે. ૩૯૩

૧૦૦૮ મુનિરાજના હૃદયમહીં આત્મા જ એક બિરાજતો;
આત્મામય જ પ્રવર્તન રહે, નિર્ણય આત્મ આશ્રય થકી. ૩૯૪

૧૦૦૯ ઘોર જંગલ, ગીચ ઝાડીમાં સિંહ—વાઘ ત્રાડો પાડતાં—
હો રાત જામી મેઘલી અંધકાર ચારેકોર છે. ૩૯૪

૧૦૧૦ ત્યાં ગિરિગુફા મુનિરાજ બસ ચૈતન્યમાં મસ્ત વસે;
સ્વરૂપ ઝૂલે ઝૂલતા, અદ્‌ભૂત અહા ! કેવી દશા ? ૩૯૪

૧૦૧૧ આત્મામહીંથી બહાર જો શ્રુતાદિનાં ચિંતવનમહીં—
જોડાય ચિત્ત અને પછી અંદર ચાલ્યા જાય છે. ૩૯૪

૧૦૧૨ સ્વભાવ જાણે, અનુભવે વિભાવરસ તૂટી જશે;
ચેતન ભૂમિ ઊભો રહે, વિભાવ તો તૂટી શકે. ૩૯૫

૧૦૧૩ વિભાવમાં ઊભો રહે, તૂટે નહીં, મંદ જ થશે;
દેવાદિની ગતિ તો મળે, પણ ચાર ગતિ તો ના ટળે. ૩૯૫

૧૦૧૪ ત્રણ લોકને જાણે, ન તેનો તને મહિમા અરે !
આત્મા જ સર્વસ્વ ખરે ! તેમાં બધું જ ભરેલ છે ! ૩૯૬

૧૦૧૫ જ્ઞાતા અને દૃષ્ટા સમગ્ર વિશ્વનો છે આતમા;
અનંત શક્તિવંતમાં ઋદ્ધિ બધી ભરી છે, અહા ! ૩૯૬

૧૦૧૬ ઓછું નથી તેમાં કશું, તેમાં બધું જ ભરેલ છે;
તારામહીં ઋદ્ધિ બધી બાહ્ય ઋદ્ધિનું શું કામ છે ? ૩૯૬

૧૦૧૭ અંદર રુચિ ના થાય જો બહારમાં કુતૂહલ કરે;
અંદર નહીં તે જઈ શકે, પ્રાપ્તિ ન સુખની થાય છે. ૩૯૬

૧૦૧૮ ચૈતન્ય છે મુજ દેવ હું, તેને જ છું દેખું ખરે;
બીજું બધું જે અન્ય છે મુજને નહીં દેખાય તે. ૩૯૭

૧૦૧૯ દ્રવ્ય ઉપર જોર થઈ અધિકતા તેની રહે;
તેને બધું તો ત્યારથી નિર્મળ થાતું જાય છે. ૩૯૭

૧૦૨૦ પોતે ગયો પોતામહીં એકત્વ બુદ્ધિ પણ ગઈ;
છે રસ બધાં ઢીલા થયા સ્વરૂપ રુચિ પ્રગટતી. ૩૯૭

૧૦૨૧ અન્ય રસે મોળાશ ને ન્યારો બધાથી થઈ ગયો;
સંસાર રસ ઘટ્યો અનંતો ને દિશા પલટાઈ ગઈ. ૩૯૭

૧૦૨૨ મારો પરમભાવ મેં ગ્રહ્યો, ત્રણ લોક વૈભવ તુચ્છ થયો;
પર્યાય નિર્મળ પ્રગટતી, દૃષ્ટિ બળે કહું તે મુજ નથી. ૩૯૮

૧૦૨૩ સ્વભાવ મુજ અગાધ ને અમાપ છે, પર્યાયનું–
નિર્મળ વેદન હો ભલે, ન વિશેષતા તેની કશી. ૩૯૮

૧૦૨૪ આવી અહો ! દૃષ્ટિ પરમ દ્રવ્યની કયારે પ્રગટતી ?
મહિમા કરી, નિજમાં વળે, પાછી ફરે તો પ્રગટતી. ૩૯૮

૧૦૨૫ સમકિતદૃષ્ટિને ભલે સ્વાનુભૂતિ પૂર્ણ નથી;
પણ દૃષ્ટિમાં તો તેહને પરિપૂરણ ધ્રુવ આત્મા જ છે. ૩૯૯

૧૦૨૬ જ્ઞાન પરિણતિ દ્રવ્યને–પર્યાયને જાણે ભલે;
પણ જોર ના પર્યાયમાં છે જોર તો દ્રવ્યે રહે. ૩૯૯

૧૦૨૭ શાશ્વત પૂર્ણ ચૈતન્ય હું, મુજ ગુણ તેના તે જ છે;
મુજ ગુણ તો તેવા જ છે, એ દૃષ્ટિ ઉપાદેય છે. ૪૦૦

૧૦૨૮ એકેન્દ્રીમાં ના ઘટ ગુણે, ના દેવમાં વૃદ્ધિ કશી;
જાણે બધું, પણ દૃષ્ટિ તો એક દ્રવ્ય ઉપર છે ઠરી. ૪૦૦

૧૦૨૯ વિભાવથી પાછું વળી પરિણમન, સ્વરૂપે ઢળે;
જ્ઞાની નિજ સ્વરૂપમહીં પરિપૂર્ણ ઠરવા તલસશે. ૪૦૧

૧૦૩૦ વિભાવ છે મુજ દેશ ના, પરદેશમાં આવી ગયા;
અમને ન અહીંયા ગોઠતું, ન અમારું અહીંયા કો અરે ! ૪૦૧

૧૦૩૧ જયાં જ્ઞાન, શ્રદ્ધા, ચારિત્ર, આનંદ વીર્યાદિ વસે;
એ અનંતગુણ પરિવાર અમ ને તે અમારો દેશ છે. ૪૦૧

૧૦૩૨ સ્વરૂપ સ્વદેશે જઈ રહ્યાં અમે હવે ત્વરાથકી;
અમ વતનમાં વસવું હવે નિરાંતથી, જયાં અમ બધાં. ૪૦૧

૧૦૩૩ પ્રાપ્ત કરાવે કેવળ એવું ધ્યાન તે પ્રતિક્રમણ છે;
ઉત્તમ એ પ્રતિક્રમણથી દોષીત ફરી ના થાય છે. ૪૦૨

૧૦૩૪ શ્રેણીથકી વીતરાગતા થઈ કેવળ સાગર ઊછળ્યો;
અંતર્મુખ બહુવાર પણ, છેલ્લી કોટીની આ જાણવી. ૪૦૨

૧૦૩૫ પર્યાય એવી આતમાની સાથ છે જોડાઈ ગઈ;
ઉપયોગ અંદરમાં ગયો પાછો બહાર ન આવશે. ૪૦૨

૧૦૩૬ ચેતન પદારથ જ્ઞાનમાં જેવો હતો જાણ્યો, અહા !
પર્યાયમાં પણ તેહવો કર્યો પ્રસિદ્ધ, તું જાણજે. ૪૦૨

૧૦૩૭ ચંદ્રપૂરણના યોગથી સમુદ્રમાં ભરતી થતી;
મુનિરાજને એકાગ્રતા અવલોકને ભરતી થતી. ૪૦૩

૧૦૩૮ વૈરાગ્યની ભરતી ચઢે, આનંદ ભરતી આવતી;
ને સર્વગુણ પર્યાયની યથા સંભવ ભરતી આવતી. ૪૦૩

૧૦૩૯ ન બહારથી ભરતી થશે, ભીતર થકી તે આવશે;
ચૈતન્ય ચંદ્ર નિહાળતાં અંદર ચેતન ઉછળે. ૪૦૩

૧૦૪૦ ચારિત્ર ને સુખ ઊછળે, છે વીર્ય પણ ત્યાં ઊછળે;
છે ધન્ય એવી મુનિદશા ત્યાં તો બધું છે ઊછળે. ૪૦૩

૧૦૪૧ પરથી જુદા જ્ઞાયકતણો નિર્ણય કરી, ભેદજ્ઞાનનો;
અભ્યાસ વારંવાર કર સૌ વિકલ્પ તૂટી જાય તો. ૪૦૪

૧૦૪૨ ઉપયોગ ઊંડો જાય છે, ને ભોંયરે ભગવાનના–
દર્શન જેમ થાય તેમ આતમદર્શન થાય ત્યાં. ૪૦૪

૧૦૪૩ એ રીત સ્વાનુભૂતિ કળા જો હાથમાં છે આવશે;
તો પૂર્ણતાની કળા મળે, કેવળજ્ઞાન કેલિ થાય છે ૪૦૪

૧૦૪૪ અજ્ઞાની જીવ 'ક્ષણિક બધું, સંસાર તો દુઃખરૂપ છે;'
એ ભાવથી વૈરાગી બને, ના સહજરૂપ તે હોય છે. ૪૦૫

૧૦૪૫ 'આત્મા જ મુજ આનંદરૂપ' એ અનુભવ સહ વૈરાગ્ય તો–
તેને નથી હોતો કદી તેથી ન શાંતિ પરિણમે. ૪૦૫

૧૦૪૬ તે ઘોર તપને આચરે પણ એકતા છે કષાયમાં–
તેથી ન તેને રે ! કદી આત્મ પ્રતપન થાય છે. ૪૦૫

૧૦૪૭ તું અનાદિ છો, અનંત છો, છે 'જાણવું' સ્વભાવમાં;
શરીરાદિ જડ પદાર્થ સૌ છે કાંઈ પણ ના જાણતા. ૪૦૬

૧૦૪૮ જે 'જાણનારો' તે કદી 'ના જાણનાર' બનતો નથી;
'ના જાણનારો' પણ બને ના 'જાણનારો' રે, કદી ! ૪૦૬

૧૦૪૯ તું તો સદા ભિન્ન રહે જડ સાથ માની એકતા;
છો દુઃખી તું રે !થઈ રહ્યો, સ્વરૂપ પણ એ તારું ના. ૪૦૬

૧૦૫૦ 'શુભ–અશુભના ભાવો બધાં ના અસલી તુજ સ્વરૂપ છે;'
જ્ઞાની અનુભવી પુરુષનો નિર્ણય આ તું જાણજે. ૪૦૬

૧૦૫૧ પ્રયત્ન કર એ દિશમાં, મતિ વ્યવસ્થિત કર્યા વિના–
તર્કો ગમે તેવા કરે તો પાર ના આવે ભલા. ૪૦૬

૧૦૫૨ પ્રવચનસાર શરૂ કરે આચાર્ય કુંદકુંદ ત્યાં–
પરમેષ્ઠી પંચ પ્રતિ અહો !કેવી ભક્તિ ઉલ્લસી રહી ! ૪૦૭

૧૦૫૨ પરમેષ્ઠી ભગવંતને કરી યાદ ભક્તિ ભાવથી–
(A) નમસ્કાર છે કેવા કર્યા ? ભક્તિ થકી વંદન કરી. ૪૦૭

૧૦૫૩ ત્રિકાળના તીર્થંકરો સાથે જ યાદ કરી અને–
વિદ્યમાન સૌ ભગવંતને જુદા કરીને યાદ એ– ૪૦૭

૧૦૫૪ 'વંદન કરું ભેગા સહુને પ્રત્યેકને વળી અલગ કરું'
કહી એમ ભક્તિ ભાવથી આચાર્યદેવ નમી પડે. ૪૦૭

૧૦૫૫ આવા ભક્તિભાવ મુનિ–સાધકને આવ્યા કરે;
નામ ભગવાનનું આવતાં ત્યાં રોમ ખડા થઈ જાય છે. ૪૦૭

૧૦૫૬ આવા ભક્તિ આદિ બહુ શુભભાવ જ્યારે આવતા;
ત્યારે પણ મુનિરાજને ધ્રુવ જ્ઞાયક મુખ્ય સદા. ૪૦૭

૧૦૫૭ શુદ્ધાત્મ આશ્રિત સમાધિરૂપ પરિણમન વર્ત્યા કરે;
શુભભાવ ઉપર જ તરે વિપરીતપણે વેદાય છે. ૪૦૭

૧૦૫૮ નિવૃત્ત સહેજ પરિણામમાં અપૂર્વ શીતળતા ભરી;
તો સર્વથા નિવૃત્ત થયાં તે શાંતિની તો વાત શી? ૪૦૮

૧૦૫૯ સાગર ઉછળે શાંતિનો, શાંતિ અમાપ હોય છે;
આનંદ સાગર ઉછળે તો આનંદ એવો હોય છે. ૪૦૮

૧૦૬૦ તુજ આત્મમાં પણ એહવા સુખ—આનંદ ભરેલ છે;
ચાદર વિભ્રમની અરે! આડી પડી, દેખાય ના. ૪૦૮

૧૦૬૧ મધુબિંદુની લાલસમહીં વિદ્યાધર અવગણના કરી;
વિષય સુખ લાલસમહીં ગુરુ અવગણી, રુચિ ના કરી. ૪૦૯

૧૦૬૨ 'હું આટલું કામ કરી લઉં, હું આટલું કામ કરુ' હવે;'
શુદ્ધાત્મનો ઉદ્યમ નહીં, પ્રવૃત્તિરસ લીન રહે. ૪૦૯

૧૦૬૩ ત્યાં મરણનો સમય થતાં પસ્તાવ તો શા કામનું?
'માનવ જનમ એળે ગયો જો કાંઈ મુજ રે !ના કર્યું.' ૪૦૯

૧૦૬૪ મરણ સમય કોનું શરણ? તે રોગ, વેદન, મરણ ને—
એકત્વ— આર્ત ધ્યાનમાં ભિંસાઈ ભવ હારી જાય છે. ૪૦૯

૧૦૬૫ પણ રોગ, વેદન, મરણની ભીંસે ન ધર્મી ભિંસાય છે;
કારણ સદા તેણે અહા ! શુદ્ધાત્મનું શરણું ગ્રહ્યું. ૪૦૯

૧૦૬૬ વિપત્તિ સમય નિજમાંથી તે શાંતિ સદા છે મેળવે;
તે વિકટ પ્રસંગમાં શુદ્ધાત્મનું શરણું ગ્રહે. ૪૦૯

૧૦૬૭ મરણાદિ સમયે તે ધર્મી શાશ્વત સુખ સરોવરે—
વિશેષ ને વિશેષ તે ડૂબકી મારી જાય છે. ૪૦૯

૧૦૬૮ ના રાગ છે, ના વેદના, મરણ ન, શાંતિ અખૂટ છે;
જે દેહ શાંતિથી છૂટે તે જીવન છે સફળ ખરે. ૪૦૯

૧૦૬૯ મરણ સમય પહેલાં જ તું જા ચેતી, તું સાવધ થઈ;
શરણભૂત શુદ્ધાત્મને અનુભવવામાં ઉદ્યમ કરે. ૪૦૯

૧૦૭૦ અસ્તિત્વને પકડયું નથી 'શાશ્વત સુખ ભરપૂર છે;'
એ અનુભવી શુદ્ધ પરિણતિની ધારા પ્રગટાવી નથી. ૪૧૦

૧૦૭૧ તેણે ભલે સંસારસુખ નાશવંત દુ:ખદાયક ગણી–
દીધાં તજી, ને બહારમાં તે મુનિપણું ગ્રહણ કરે. ૪૧૦

૧૦૭૨ દુર્ધર તપો બહુ તપે, ઉપસર્ગમાં અડગ રહે;
તો પણ તેને તે બધું નિર્વાણ કારણ ના બને. ૪૧૦

૧૦૭૩ શુદ્ધ પરિણમન તો છે નહીં, શુભ સ્વર્ગનું કારણ બને;
માત્ર શુભ પરિણામ તે પણ ઉપાદેય બુદ્ધિ વર્તશે. ૪૧૦

૧૦૭૪ નવ પૂર્વ ભલેને તે ભણે સામાન્ય દ્રવ્ય સ્વરૂપને–
અનુભવપૂર્વક જાણે નહીં તો તે બધુંજ અજ્ઞાન છે. ૪૧૦

૧૦૭૫ જે મુનિ ખરા, દ્રવ્યાશ્રિતે પરિણતિ શુદ્ધ ચાલુ રહે;
કર્તાપણું સમકિત થતાં તુરત છૂટી જાય છે. ૪૧૦

૧૦૭૬ જ્ઞાતૃત્વ ધારા અતૂટ છે, સમાધિ પરિણમી હોય છે;
શીઘ્ર શીઘ્ર નિજાત્મમાં લીન થઈ આનંદ વેદશે. ૪૧૦

૧૦૭૭ મુનિરાજને પ્રચુરપણે સંવેદન સ્વમાં રહે;
છે તે દશા અદ્‌ભૂત અહા ! ન્યારી જગતથી હોય છે. ૪૧૦

૧૦૭૮ વીતરાગતા પૂર્ણ નથી, વ્રતાદિ શુભભાવો રહે;
તે હેય બુદ્ધિ આવતાં, તે મુનિદશા મુક્તિ લહે. ૪૧૦

૧૦૭૯ ભ્રાંતિ કરી કાળ અનંતથી પર કાર્ય કરવાને મથે;
પણ પરતણાં ના કાર્ય તે બિલકુલ છે રે ! કરી શકે. ૪૧૧

૧૦૮૦ દ્રવ્યો બધાં સ્વતંત્રપણે જ સદાય છે પરિણમે;
કર્મ, ક્રિયા, કર્તા સહુ જીવ–પુદ્‌ગલમાં નિજમાં રહે. ૪૧૧

૧૦૮૧ વર્ણાદિરૂપ પુદ્‌ગલ પરિણમે જીવ ફેરવી શકતો નથી;
ચેતનરૂપ ચેતન પરિણમે જડ કાંઈ તેમાં કરે નહીં. ૪૧૧

૧૦૮૨ જ્ઞાયક સ્વભાવી તું સદા પૌદ્‌ગલિકથી જુદો જ છો;
પણ શુભ–અશુભ ભાવો ખરે સ્વભાવ તુજ તો છે નહીં. ૪૧૧

૧૦૮૩ અજ્ઞાનથી વિભાવ–પરમાં એકત્વ બુદ્ધિ તેં કરી;
તે બુદ્ધિને તું છોડીને જ્ઞાતા થઈ જા રે ! ફરી. ૪૧૧

૧૦૮૪ શુદ્ધાત્મની પ્રતીતિ થકી દ્રવ્યદૃષ્ટિને પ્રગટાવીને;
જ્ઞાયક પરિણતિ પ્રગટાવ તે મુક્તિ પ્રતિ પ્રયાણ છે. ૪૧૧

૧૦૮૫ છે મરણ તો નક્કી અરે ! ત્યારે બધું છૂટી જશે;
બાહ્ય ચીજ એક જ છોડતા દુઃખ કેટલું તને થાય છે. ૪૧૨

૧૦૮૬ તો બહારના દ્રવ્ય–ક્ષેત્ર–કાળ ને ભાવો બધાં–
ને છોડતાં એક સાથ તુજને દુઃખ અહો ! કેવું થશે? ૪૧૨

૧૦૮૭ ને મરણનું વેદન બહુ 'કોઈ બચાવો રે ! મને'
હૃદય તુજ પોકારશે, શું કોઈ બચાવી શકે? ૪૧૨

૧૦૮૮ ધન ઢગ કરે, વૈદ્યો કરે, સબંધીઓ ટોળે વળે;
ટગર ટગર તું જોઈ રહે ના કોઈ શરણ તુજ થઈ શકે. ૪૧૨

૧૦૮૯ શાશ્વત સ્વરક્ષિત જ્ઞાનાનંદરૂપ આત્માતણી–
પ્રતીતિ– અનુભૂતિ જો કરી, આરાધના તેની કરી– ૪૧૨

૧૦૯૦ શાંતી પ્રગટ ત્યાંથી કરી તે એક શરણું આપશે;
માટે જ તું અત્યારથી પ્રયત્ન તેનો કર હવે. ૪૧૨

૧૦૯૧ માથે ભમે છે મોત રે ! સ્મરણ એવું લાવીને;
પુરુષાર્થને ઉપાડજે છે એ જ તુજ કર્તવ્ય રે ! ૪૧૨

૧૦૯૨ 'અબ હમ અમર હુએ ન મરેંગે' ભાવમાં જ સમાધિથી–
જો દેહને ત્યાગી અને આત્મા જ ઉપાદેય ગણે. ૪૧૨

૧૦૯૩ ભગવાન સર્વજ્ઞ પરિપૂર્ણરૂપે પરિણમી ગયા;
પૂર્ણપણે તેઓ સદા પ્રત્યક્ષ નિજને જાણતાં. ૪૧૩

૧૦૯૪ સર્વ ગુણનાં ભૂત–વર્તમાન ને ભાવિતણાં–
પર્યાયના અવિભાગ ને પ્રતિચ્છેદને જાણતાં. ૪૧૩

૧૦૯૫ સ્વક્ષેત્રમાં રહી પર સમીપ–સન્મુખ તે થયા વિના;
છૂટા રહી, સર્વ પદાર્થને પ્રત્યક્ષ તેઓ જાણતા. ૪૧૩

૧૦૯૬ પરને વળી તે જાણવાં પરસન્મુખ ના તે થાય છે;
જો થાય, જ્ઞાન દબાય, રોકાય છે ના ખીલશે. ૪૧૩

૧૦૯૭ પૂર્ણરૂપ જો પરિણમિત તો જાણ્યા વિના ન રહે કશું!
તે જ્ઞાન ચેતન ક્ષેત્ર રહીને ત્રણકાળ લોક અવલોકતા. ૪૧૩

૧૦૯૮ જ્ઞેયો બધાં સ્વ–પર સહુ જાણે ગયા કોતરાય છે;
સ્વ–પર બધું એક સમયમાં પ્રત્યક્ષ સહજ તે જાણશે. ૪૧૩

૧૦૯૯ વીતી ગયું તે બધાયને પૂરેપૂરું તે જાણશે;
થાશે પછી તે પણ પૂરું તે જાણશે, અદ્‌ભૂત છે. ૪૧૩

૧૧૦૦ ચક્રવર્તી જાણે ભીખ માંગે તેમ તું ત્રણ લોકનો–
છો નાથ પણ ભીખ માંગતો, ૠદ્ધિ ભંડારે ભર્યો. ૪૧૪

૧૧૦૧ 'પર ચીજ મુજને જ્ઞાન દેજો સુખ પણ દેજો, અરે !'
અનંત ગુણ ભંડાર એ રીત ભીખ છે માગ્યા કરે. ૪૧૪

૧૧૦૨ 'સુખ–ધન, શરીર ને શુભ કાર્ય, શુભ પરિણમનમાં–
મળજો મને'– એ માંગતો પણ ના મળે કંઈ બહારમાં. ૪૧૪

૧૧૦૩ ઊંડાણથી જ્ઞાયકપણાનાં અભ્યાસને જો તે કરે;
અંદરમહીં તો તેહને સઘળુંય છે પ્રાપ્ત બને. ૪૧૪

૧૧૦૪ જો ભોંયરે યોગ્ય ચાવીથી તાળું પટારાતણું–
છે ખોલવામાં આવતું, નિધાન મળે દારિદ્ર જતું. ૪૧૪

૧૧૦૫ ઊંડાણ જઈ જ્ઞાયકતણાં અભ્યાસરૂપ ચાવી વડે–
ભ્રાંતિરૂપી તાળું ખુલે, નિધાન મળે, માંગણ મટે. ૪૧૪

૧૧૦૬ 'અમ આતમા અનંતગુણથી ભરેલ છે' મુનિ કહે;
'અમૃતરસ અનંતથી ભરેલ ઘડો અક્ષય છે.' ૪૧૫

૧૧૦૭ અલ્પ અમૃત પીવાય એવી ધારથી સંતોષ ના;
અમૃત પૂરું હર સમય પીવાય એ જોઈએ પૂર્ણ દશા. ૪૧૫

૧૧૦૮ આદિ અનંત સમયે સમય અમૃત પૂરું પીવાય છે;
ઘટ પણ સદા તોપણ પૂરો ભરેલ દેખાય છે. ૪૧૫

૧૧૦૯ ચમત્કારિક શક્તિવાળું પૂર્ણ શાશ્વત દ્રવ્ય ને–
પ્રત્યેક સમયે એ જ પૂરણ વ્યક્તિવંત પરિણમન છે. ૪૧૫

૧૧૧૦ ઉત્કૃષ્ટ એ નિર્મળ દશાની ભાવનાને ભાવીએ;
એ ભાવના સમય મુનિતણી દૃષ્ટિ સદા શુદ્ધ ઉપર છે. ૪૧૫

૧૧૧૧ ભવભ્રમણ ચાલું રહે એ ભાવમાં ભવ જાય ના;
આ ભવતણા અભાવનો પ્રયત્ન આ ભવમાં કરો. ૪૧૬

૧૧૧૨ ભવભ્રમણ બહુ દુઃખ ભર્યાં, ગંભીરતાથી વિચાર રે !
ક્ષણ એક પણ વસમી બને, સાગરોપમ રે !શી રીત ગયાં ? ૪૧૬

૧૧૧૩ એ નરકનાં દુઃખો બધાં ના સાંભળ્યા જાતાં અરે !
કાંટો પગે જો વાગતો તે પણ સહન ના થઈ શકે. ૪૧૬

૧૧૧૪ તો પણ જેના ગર્ભમાં અનંતાનંત છે દુઃખો પડયાં;
મિથ્યાત્વને તું છોડવા ઉદ્યમી નહીં, ગફલત કરે. ૪૧૬

૧૧૧૫ ઉત્તમ આવો યોગ તે કયારે ફરી મળશે, ભલા ?
પ્રયત્ન મરણિયો કર હવે મિથ્યાત્વને તું છોડવા. ૪૧૬

૧૧૧૬ શાતા–અશાતાથી અને આકુળતાથી ભિન્ન એ;
નિરાકુળતા 'જ' સ્વભાવને અનુભવ પુરુષાર્થ વડે. ૪૧૬

૧૧૧૭ સમકિત સહ સ્થિરતા વધે સ્વરૂપ લીન થયા કરે;
એવી દશા જો થાય ત્યારે મુનિપણું છે આવશે. ૪૧૭

૧૧૧૮ સ્વરૂપ તરફ ઢળતી બહુ શુદ્ધિ વધી ગઈ હોય છે;
ઘડીયે ઘડી આત્મામહીં અંદર પ્રવેશી જાય છે. ૪૧૭

૧૧૧૯ વીતરાગતા પૂર્ણ નથી જ્યારે બહાર તે આવતા;
વિકલ્પ તો ઊઠે ભલે, ગૃહસ્થ સમ ના આવતા. ૪૧૭

૧૧૨૦ સ્વાધ્યાય–ધ્યાન–તપ–ભક્તિ–વ્રત–સંયમાદિનાં–
(A) મુનિ યોગ્ય હઠ રહિત વિકલ્પ બધાય હોય છે. ૪૧૭

૧૧૨૦ નહીં બહારનું કશું જોઈએ માત્ર શરીરનો સબંધ છે;
તેના પ્રતિ પણ તેમને પરમ ઉપેક્ષા હોય છે. ૪૧૭

૧૧૨૧ નિસ્પૃહ બહુ તેની દશા ને આતમાની લગન છે;
ચૈતન્ય નગરીમાં સદાયે તેમનો તો વાસ છે. ૪૧૭

૧૧૨૨ 'હું ને ગુણો મારા અનંતા તે જ વસ્તી નગરની–
ચેતનતણી તેનું જ મારે કામ, બીજાનું નહીં.' ૪૧૭

૧૧૨૩ આત્માતણું છે કામ વિશ્વ વાર્તા થકી ઉદાસ છે;
આત્મામય જ જીવન થયું, છે ચાલતા સિદ્ધ જ એ. ૪૧૭

૧૧૨૪ અણસાર પિતાનો પુત્રમાં એમ જિનતણો મુનિરાજમાં;
છઠ્ઠે–સાતમે ન ઊભા રહે આગળ જ વધતા જાય છે. ૪૧૭

૧૧૨૫ કેવળ થતાં સુધી શુદ્ધિની વૃદ્ધિ જ કરતા જાય છે;
સાધના અંતરતણી ના જગતને દેખાય એ. ૪૧૭

૧૧૨૬ ના સાધના બહારથી જોવા તણી એ ચીજ છે;
અંતર દશા છે તેમની આશ્ચર્યકર ને વંદ્ય છે. ૪૧૭

૧૧૨૭ અનંત અવ્યાબાધ સુખ છે સિદ્ધને પ્રગટ થયું;
ના નાશ છે, સુખ છોડીને કદી દુઃખમાં ના આવશે. ૪૧૮

૧૧૨૮ છૂટાં પરિણમે ક્ષાયિકમાં, ભેગા કદી ના થાય તો–
સિદ્ધપણે જે પરિણમે અસિદ્ધપણે કાં પરિણમે? ૪૧૮

૧૧૨૯ પરિણમન સિદ્ધત્વનો પ્રવાહ સાદી–અનંત છે;
સાદી અનંત કાળ પ્રતિસમય પૂર્ણરૂપ પરિણત રહે. ૪૧૮

૧૧૩૦ ગુણરત્ને છે ચમક ઊઠે, ઉત્પાદ–વ્યય ત્યાં થાય છે;
તેવા જ તો પણ પૂર્ણ રહે, સ્વભાવ છે અદ્‌ભૂત ખરે. ૪૧૮

૧૧૩૧ પ્રશ્ન–કાળ અનંતના દુઃખી અમારું દુઃખ કેમ મટી શકે ?
ઉત્તર–'જુદો વિભાવથી હું જ્ઞાયક' માનશે સુખ આવશે. ૪૧૯

૧૧૩૨ જ્ઞાયક પ્રતીતિ થાય ને વિભાવથી રુચિ છૂટે;
એ પ્રયત્નથી વિકલ્પ તૂટીને સુખની ઘડી ત્યાં આવશે. ૪૧૯

૧૧૩૩ 'જ્ઞાયક છું હું' ઉપલકપણે પહેલાં પછી ઊંડાણથી;
પણ તું ગમે તેમજ કરી રસ્તા પરે એ જા હવે. ૪૧૯

૧૧૩૪ શુભઅશુભથી જુદાં સ્વનો અભ્યાસ જ્ઞાયકપણે કરો;
જ્ઞાયક પ્રતીતિ દૃઢ કરી ઊંડાણથી, પ્રાપ્ત કરો. ૪૧૯

**૧૧૩૫ છે તેજ સાદિ અનંત સુખ પ્રાપ્તિ તણો ઉપાય એ;**
**આત્મા જ સુખનું ધામ ત્યાંથી જ સુખ મળશે તને. ૪૧૯**

**૧૧૩૬** પ્રશ્ન—**જિજ્ઞાસુને દિનરાત શું આત્મવિચારો હોય છે?**
ઉત્તર—**ના હોય, પણ ખટક, લગની, રુચિ, ધગશ તો હોય છે.**

**૧૧૩૭ 'છે આત્મનું કરવું હવે ઓળખ કરવી મુજ હવે'**
**એ રીત વારંવાર લક્ષ આત્મા પ્રતિ વળ્યા કરે. ૪૨૦**

**૧૧૩૮** પ્રશ્ન—**અભ્યાસમાં વિશેષ કે ચિંતને સમયને ગાળવો?**
ઉત્તર—**ચિંતન સહિત અભ્યાસ ને અભ્યાસથી જ ચિંતન હોય છે.**

**૧૧૩૯ વિશેષથી વિચારતાં પરિણતિ ટકતી હોય જ્યાં—**
**વિશેષ લાભ જણાય જ્યાં વિશેષ સમયને ગાળ ત્યાં. ૪૨૧**

**૧૧૪૦ અભ્યાસથી નિર્ણય બને ને લાભ જો જણાય તો—**
**પ્રયોજનભૂત અભ્યાસને વિશેષ જરૂર તો રાખવો. ૪૨૧**

**૧૧૪૧ ચિંતન થકી દૃઢતા અને વિશેષ લાભ જણાય જો;**
**પ્રયોજનભૂત ચિંતન ખરે વિશેષ તારે રાખવું. ૪૨૧**

**૧૧૪૨ જ્યાં પરિણતિને લાભ છે ત્યાં તેમ તારે રાખવું;**
**પરિણતિ આતમ ઓળખે એ ધ્યેય તારે રાખવું. ૪૨૧**

**૧૧૪૩ એ ધ્યેય સિદ્ધિ કાજ ના 'આમ જ કરવું' નિયમ છે;**
**જ્યાં લાભને દૃઢતા વધે એમ મુમુક્ષુ ત્યાં ચાલશે. ૪૨૧**

**૧૧૪૪** પ્રશ્ન—**વિકલ્પ ના પીછો અરે! ના કેમ અમ છોડે કહો?**
ઉત્તર—**વિકલ્પ ના વળગ્યા તને તું તેહને વળગી રહે. ૪૨૨**

**૧૧૪૫ ત્યાંથી ખસી જા તું, નથી ત્યાં સુખ, ત્યા શાંતિ નથી;**
**અંદરમહીં છે સુખ પૂરણ ને ત્યાંજ સમાધાન છે. ૪૨૨**

૧૧૪૬ સ્વભાવ પ્રતીતિ પ્રથમ થાય છે, ભેદજ્ઞાન પહેલાં થાય છે;
વિકલ્પ છે તૂટે પછી સ્વાનુભૂતિ એ રીત થાય છે. ૪૨૨

**૧૧૪૭** પ્રશ્ન—**સર્વગુણાંશને સમકિત કહ્યું તો નિર્વિકલ્પ થતાં બધાં—**
**ગુણોતણું આંશિક શુદ્ધ પરિણમનનું વેદન થશે? ૪૨૩**

૧૧૪૮ ઉત્તર—આનંદગુણ પર્યાય ત્યાં પ્રગટ થતાં આત્માતણાં—
સર્વગુણનું આંશિક શુદ્ધ પર્યાયનું વેદન થશે. ૪૨૩

૧૧૪૯ આત્મા અખંડ બધાં ગુણો પણ તેથી તો તેના જ છે;
પર્યાય એકની વેદાય ત્યાં સર્વગુણની વેદાય છે. ૪૨૩

૧૧૫૦ ના નામ ગુણનાં આવડે સંજ્ઞા ન ભાષામાં કહી શકે;
તો પણ સર્વગુણતણું સંવેદન તો થાય જ ખરે. ૪૨૩

૧૧૫૧ સ્વાનુભૂતિકાળે અનંતગુણ સાગર આતમા—
આનંદ આદિ ગુણતણી પર્યાય રમતો પ્રગટશે. ૪૨૩

૧૧૫૨ છે એ દશા અદ્ભૂત ને વળી એ જ વચનાતીત છે;
ને એ દશા પ્રગટ થતાં આખું જીવન પણ પલટાય છે. ૪૨૩

૧૧૫૩ પ્રશ્ન—આત્માતણો બહુ ભાગ તો શુદ્ધ જ સદા રહેતો હશે ?
ને બહુ જ થોડા ભાગમાં શું અશુદ્ધતા આવી હશે ? ૪૨૪

૧૧૫૪ ઉત્તર—નિશ્ચયથી ન અશુદ્ધતા છે ભાગ થોડે પણ રહી;
જે અશુદ્ધતા તે તો અરે !ઉપર ઉપરે તરતી રહી. ૪૨૪

૧૧૫૫ જો અશુદ્ધતા દ્રવ્યતણાં થોડા ભાગમાં પણ આવશે;
તો અશુદ્ધતા ન નિકળી શકે, ચીરકાળ તો તે ત્યાં રહે. ૪૨૪

૧૧૫૬ બદ્ધ—સ્પષ્ટ આદિ ભાવ સૌ ઉપર તરે અંદર નહીં;
શકિત સદા છે શુદ્ધ, અશુદ્ધતા રહે વ્યકિતમહીં. ૪૨૪

૧૧૫૭ પ્રશ્ન—જિજ્ઞાસુ જીવ તત્ત્વ યથાર્થ ધારણ છતાં કયાં અટકતો ?
ઉત્તર—આ જગતની કો ચીજમાં સુખ કલ્પના તે ધારતો. ૪૨૫

૧૧૫૮ અથવા શુભ પરિણામમાં આશ્રયબુદ્ધિ રહી જતી;
ઈત્યાદિ બહુ પ્રકારથી જીવ ત્યાં અટકી જાય છે. ૪૨૫

૧૧૫૯ જો હોય જિજ્ઞાસુ વળી આત્માર્થી જો તું હોય તો;
પ્રગટી ખરી હો પાત્રતા તે કયાંય કદી ના અટકતો. ૪૨૫

૧૧૬૦ તે જીવને કો જ્ઞાનની જો ભૂલ ત્યાં રહી જાય છે;
સ્વભાવના લગની બળે તો તે પણ નીકળી જાય છે. ૪૨૫

૧૧૬૧ અંતર ખાસ પ્રકારની છે પાત્રતા જે જીવને;
તે કયાંય પણ અટક્યા વિના નિજ આત્મની પ્રાપ્તિ કરે. ૪૨૫

૧૧૬૨ પ્રશ્ન—મુમુક્ષુએ સમકિતની પ્રાપ્તિ માટે શું કરવું કહો?
ઉત્તર—સ્વરૂપ નિજ અનાદિથી છોડયું નથી, ભ્રાંતિ થઈ. ૪૨૬

૧૧૬૩ 'છોડી દીધું' ભાસ્યું ભલે પણ દ્રવ્ય તો શુદ્ધતાથી ભરેલ છે;
છે જ્ઞાયક સદા, આનંદરૂપ ને અનંતી શકિતથી ભરેલ છે. ૪૨૬

૧૧૬૪ પર દ્રવ્યથી, પર ભાવથી જ્ઞાયક જુદો પહિચાનવો;
ને ભેદજ્ઞાન અભ્યાસથી જ્ઞાયકતણી ઓળખ કરો. ૪૨૬

૧૧૬૫ 'હું જ્ઞાયક સ્વરૂપી સદા' અભ્યાસથી પ્રતીતિ કરી;
તેમાં ઠરે, ચમત્કારિક શકિતનો અનુભવ થશે. ૪૨૬

૧૧૬૬ પ્રશ્ન—મુમુક્ષુ છે જે જીવ તે પ્રથમ કહો કે શું કરે ?
ઉત્તર—દ્રવ્ય—ગુણ ને પર્યાયને પ્રથમ બધાને ઓળખે. ૪૨૭

૧૧૬૭ સ્વભાવ સામાન્યતણી, ઓળખ કરે, દૃષ્ટિ કરે;
અભ્યાસ કરતાં જો ઠરે તો વિભૂતિ પ્રગટ ત્યાં થાય છે. ૪૨૭

૧૧૬૮ ચૈતન્ય અસલ સ્વભાવમાં લગની કરે પ્રતીતિ થશે;
ને તે મહીં જો તે ઠરે તો અનુભવ તેનો થાય છે. ૪૨૭

૧૧૬૯ ચૈતન્ય પ્રથમ ઓળખ કરી વિશ્વાસ કરી ત્યાં જવું ઠરી;
ચૈતન્ય તો પ્રગટ થશે, શકિત બધી ત્યાં પ્રગટતી. ૪૨૭

૧૧૭૦ તૈયારી નિજ ત્યાં જોઈએ, પુરુષાર્થ વારંવારનો—
ઉગ્ર કરે, જ્ઞાયક તણો અભ્યાસ મંથન ચાલશે. ૪૨૭

૧૧૭૧ ચિંતવન પણ તેનું જ છે તો પ્રગટ જરૂર તે થાય છે;
ગુરુદેવ માર્ગ બતલાવીને ચારે પડખે સ્પષ્ટ કરે. ૪૨૭

૧૧૭૨ પ્રશ્ન—આત્મ વિભૂતિને તમે ઉપમા શી આપી સમજાવશો ?
ઉત્તર—અનુભવમહીં તે આવતી ઉપમા ન આપી શકાય છે. ૪૨૮

૧૧૭૩ પ્રશ્ન—છેલ્લો કહો આત્માનુભવમાં વિકલ્પ કેવો હોય છે ?
ઉત્તર—છેલ્લા વિકલ્પનો કદી ના કોઈ નિયમ હોય છે. ૪૨૯

૧૧૭૪ શુદ્ધાત્મની સન્મુખતા અભ્યાસ ભેદ સહિત કરે;
તો જ્ઞાન એ કરતાં જતાં ચૈતન્ય પ્રાપ્તિ થાય છે. ૪૨૯

૧૧૭૫ જ્ઞાયક તરફ પરિણતિ ઢળે છેલ્લાતણો ના નિયમ ખરે;
અમુક જ વિકલ્પ હોય છે એવો નહીં નિયમ બને. ૪૨૯

૧૧૭૬ જ્ઞાયક ઉગ્રતા જ્યાં થાય ત્યાં વિકલ્પનો સંબંધ નહિ;
લગની તીવ્રતા ત્યાં હોય છે, શબ્દથી વર્ણન થાય નહિ. ૪૨૯

૧૧૭૭ અભ્યાસથી ઊંડે જઈ તળમાં જઈને ઓળખે;
તળમાં જઈને જો ઠરે જ્ઞાયક ખરે તો પ્રગટશે. ૪૨૯

૧૧૭૮ પ્રશ્ન—અનુભવ થતાં વેદન કહો છે દ્રવ્ય વા પર્યાયનું?
ઉત્તર—દૃષ્ટિ રહે ધ્રુવ ધામમાં વેદન રહે આનંદાદિનું. ૪૩૦

૧૧૭૯ ફરતું નથી, બદલે નહીં અનાદિ જે અનંત છે;
દૃષ્ટિ કરે ત્યાં ધ્યાન તો, વિભૂતિનો અનુભવ કરે. ૪૩૦

૧૧૮૦ પ્રશ્ન—અનુભવ નિર્વિકલ્પમાં આનંદ કેવો થાય છે?
ઉત્તર—કો જગતના કે બહારના વિભાવ સહ ના મેળ છે. ૪૩૧

૧૧૮૧ જે અનુભવે તે જાણતો ઉપમા ન કો લાગુ પડે;
એવો જ કો અચિંત્ય ને અદ્‌ભૂત મહિમા છે અરે ! ૪૩૧

૧૧૮૨ પ્રશ્ન—આજ શ્રી મહાવીર પ્રભુનો નિર્વાણનો શુભ દિન છે;
આ પાવન પ્રસંગે અમોને કૃપયા શબ્દ બે કહો. ૪૩૧

૧૧૮૩ ઉત્તર—નિર્વાણદિનમાં વીર અહા ! આનંદ—કેવળજ્ઞાનમાં—
પરિણમન ત્યાં કરતાં હતાં સિદ્ધદશા પ્રાપ્ત કરી. ૪૩૨

૧૧૮૪ પૂર્ણ, અકંપ, અયોગીપદ, ગોળો છૂટો, ચિદ્રુપ થઈ;
સિદ્ધાલયે બિરાજીને સુખાદિ ગુણમાં પરિણમ્યા. ૪૩૨

૧૧૮૫ ચાલ્યા ગયા ત્રિલોકના એ નાથ ક્ષેત્ર ભરતથી;
ભગવાનનો વિયોગ રે ! વીરનાથના વિરહા પડયા ! ૪૩૨

૧૧૮૬ ઈન્દ્રો ઉપરથી ઉતરીને નિર્વાણ ઉત્સવ ઉજવતાં;
દેવો થકી ઉજવેલ કલ્યાણક અહા ! દિવ્ય મહા ! ૪૩૨

૧૧૮૭ તે અનુસરી દિવાળીમાં લોકો હજુ વર્ષો બધાં;
દીપમાળા પ્રગટાવીને દીપોત્સવીને ઉજવતાં. ૪૩૨

૧૧૮૮ આજે પધાર્યા મોક્ષમાં ગૌતમ અંતર ઉતરી ગયા;
વીતરાગતા પ્રાપ્ત કરી કેવળ તૂરત પામી ગયા. ૪૩૨

૧૧૮૯ સ્વક્ષેત્ર રહી સ્વપરપ્રકાશક જ્ઞાન જે પ્રગટ થયું;
આશ્ચર્યકર તે જ્ઞાન લોક અલોકને પ્રત્યક્ષ કરે. ૪૩૨

૧૧૯૦ આતમ અસંખ્ય પ્રદેશમાં આનંદ આદિ અનંત જે;
ગુણોતણી અનંત પૂરણ પર્યાય છે પ્રકાશતી. ૪૩૨

૧૧૯૧ ક્ષેત્ર ભરત વિરહા પડયા, આ કાળ કેવળજ્ઞાની ના;
વિદેહ ના વિરહ પડે ધર્મકાળ ત્યાં વર્તે સદા. ૪૩૨

૧૧૯૨ આજ પણ ભિન્ન વિભાગ વીસ તીર્થંકરો વિદ્યમાન છે;
પુષ્કલાવતીવિજયમહીં નાથ સીમંધર વિચરી રહ્યાં. ૪૩૨

૧૧૯૩ સમવસરણે બિરાજીને ધ્વનિ દિવ્ય છે વરસાવતા;
એ રીત અન્ય વિભાગમાં તીર્થંકરો વિચરી રહ્યાં. ૪૩૨

૧૧૯૪ નિર્વાણ વીર પધારીયા તો પણ પંચમ કાળમાં;
શાસન વીરનું ભરતમાં ઉપકાર છે વર્તી રહ્યાં. ૪૩૨

૧૧૯૫ વીર શાસને સમર્થ બહુ આચાર્ય ભગવંતો થયા;
વીર વાણીના રહસ્ય બહુ પ્રકાર શાસ્ત્રોમાં ભર્યા. ૪૩૨

૧૧૯૬ શ્રી કુંદકુંદાદિએ દિવ્યધ્વનિતણાં રહસ્યો બહુ ભર્યા;
પરમાગમ રચી મુક્તિતણો માર્ગ અદ્ભૂત પ્રકાશતા. ૪૩૨

૧૧૯૭ ને હાલમાં શ્રી ગુરુ કહાન પણ સૂક્ષ્મ રહસ્યો ખોલતા;
મુક્તિતણાં એ માર્ગને સ્પષ્ટ રીતે સમજાવતા. ૪૩૨

૧૧૯૮ સાતિશય વાણી—જ્ઞાનથી જાગ્રત ભારતને કર્યું;
ઉપકાર છે અમાપ એ આ કાળમાં ભાગ્ય ફળ્યું ! ૪૩૨

૧૧૯૯ સાતિશય ગુણરત્નથી ભરપૂર ગુરુ મહિમા અને—
ચરણ કમળની ભક્તિ અહોનિશ મુજ અંતરમાં રહો. ૪૩૨

પદ્યરૂપાંતર રચના તા. ૩-૬-૯૬ થી તા. ૧૮-૧૦-૯૬

# कुंद वाणी तो आज फळी

कहान मुखेथी जाय लळी, सुणे मानव मेदनी मळी;
एमां आतमनां गुण खळी, कुंद वाणी तो आज फळी। १

जीवननी शुभ राह मळी, घरघर मंगल गाननी पळी;
मंदिरमां मंगलमय मळी, कुंद वाणी तो आज फळी। २

आतमाना गौरवे ढळी, प्रकाशना पूरोथी वळी;
कर्मोने नाखे ए दळी, कुंद वाणी तो आज फळी। ३

तिमिरनी भींतो गई चळी, केवी भव्य, गंभीर ने गळी!
मुक्ति वधाववा जाय लळी, कुंद वाणी तो आज फळी। ४

लावी ते सुंदरता रळी, मधुर रसथी भरी ए कळी;
प्रसरे गंध सुवासित भळी, कुंद वाणी तो आज फळी। ५

जीवन विग्रह जाय टळी, भवना थाके विश्रांति मळी;
उन्नत सरखी एनी पळी, कुंद वाणी तो आज फळी। ६

काचां हैयाने जाय कळी, एदीनी भाईबंधी टळी;
रंकोने बादशाही मळी, कुंद वाणी तो आज फळी। ७

ताप शमावती ए सळी, सघळांने शांति तो मळी;
अंगारे पण अमृत भळी, कुंद वाणी तो आज फळी। ८

डूबी आगमनां जळमां ढळी; जाणे रमती रास ए फळी!
जगनां शोर बकोरे शमी, कुंद वाणी तो आज फळी। ९

कोईथी जाय ना ए चळी, कोई शके ना एने छळी;
केवी अजब आशाए भळी! कुंद वाणी तो आज फळी। १०

समयसारनी कुमळी कळी, मोक्षमार्गे जाय छे लळी;
जंगलमांथी अहो! ए मळी, कुंद वाणी तो आज फळी। ११

('कहान महिमा' १९६६ में प्रकाशित)
रचना-दि. ७-३-१९६५, अड़ताला

'चैतन्यप्रिय'

# नवली बीजलडी

नव नव नवली बीजलडी ने मोतीचंदने द्वार;
कुंवर मीठुं मलकतां आव्या आज उजमबा द्वार।

हंसता-खेलता वरसो वीत्या, जोषीए मीठा वेणलां कीधां; (२)
उमराळामां जन्मेल रतन आ थाशे जरूर महान–कुंवर०

कुंदकुंद भक्त क्हान गुरुजी, अपार छे श्रुतलब्धी धारी; (२)
देश-विदेशमां व्यापी गई छे गुरुनी महिमा अपार–कुंवर०

साची, सीधी ने सचोट वातो, पेंथीए तेल नाखी समजावी; (२)
महाभिनिष्क्रमण कर्तानो छे मेरु सम पुरुषार्थ–कुंवर०

शांत, सरळ, गुणवंत, वैरागी, आ काळनो छो अचंबो भारी; (२)
तेजस्वी ए तारकनो छे प्रस्फुरीत चेतन चळकाट–कुंवर०

बाळक समजे तेवी छे भाषा, सौ जीवोने जाग्रत करतां; (२)
स्वरूप परिणत क्हान गुरुजी छो शासननां शणगार–कुंवर०

चोळीने माल तैयार आपे, कंटाळो ना जरीए आवे; (२)
गुरुजी तारा उपकारो ना को'थी कथी शकाय–कुंवर०

ज्ञाननो तो छे धोध वहाव्यो, नहावानो ना अवसर चूकवो; (२)
भाग्यशाळी अम जीवो पर छे आपनो महान प्रताप–कुंवर०

जीवो सहु बहु तृप्त थया छे, भवभ्रमण अंत जरूर थवानो; (२)
प्रमाद करशे तो पछताशे सदाय अपरंपार–कुंवर०

ज्ञायकमां गुरुनी झमवट झामी, हालतां-चालतां परभु में पेख्या; (२)
सत्य शोधक, भारत भुषण, कदी न छोड़ुं तुज साथ–कुंवर०

रचना-दि. १७-४-२००३,
सोनगढ़

'चैतन्यप्रिय'

# क्हानने

(राग-वादळी, क्यां रे गई ऐली वादळी!)

काहनजी! शुं रे कहुं हुं कहानजी!

तमे भारे करी आ जग माथे! बदली नाख्यो समाजने संगाथे,
नहीं हती आवी आश, न'ती आवी कदी वास,
तारा शुं रे, करूं हुं वखाणजी?—कहानजी! १

जनम्या तमे जैन धर्ममांहे, दीक्षा लीधी, संसार नव चाहे;
छोडी जगनी जंजाळ, लीधी धरम केरी वाट,
तमे कर्यो आगम अभ्यासजी:—कहानजी! २

धर्ममाहें चालता'ता वाड़ा, एक पंथमांथी अनेक रचाया,
तेने कर्यो पड़कार! लीधो सत्यनो आधार,
कुंदकुंदना लाडीला कहानजी!—कहानजी! ३

सुवर्णपुरीमां आवी कर्यो वास, परिवर्तन पछी कर्युं त्यां ज,
डर न राख्यो लगार! रह्यो अड़ग तारी वात!
एणे रच्यो नवल समाजजी:—कहानजी! ४

जिनमंदिरो रचाया हजारो, सीमंधरे कर्यो तुंने इशारो!
मानस्थंभ आव्यो लई, समवसरण रचना थई,
एणे आप्युं नवीन जीवनजी:—कहानजी! ५

साचे क्रांति करी तें जग मांहे! मिथ्यात्वने तुरत तोडी पाडे!
केम करुं हुं वखाण! भर्यो तुजमां भंडार!
जग आखाने तुं उगारजी:—कहानजी! ६

('कहान महिमा' १९६६ में प्रकाशित)
रचना-दि. १६-५-१९६१, सोनगढ़

'चैतन्यप्रिय'

# 'चैतन्य प्रिय' रचित प्रकाशित थयेल रचनाओं

| कहान महिमा | पुस्तिका |
|---|---|
| ● आ सुवर्णपुरेथी छूटती | जीवसूत्र |
| ● पोन्नुर धाम जई आव्या | जीवसूत्र |
| ● कहान दोहरा | जीवसूत्र |
| ● तारा नेत्र महींथी किरणो खरे | जीवसूत्र |
| ● तारी लगनी लागी गुरुजी | जीवसूत्र |
| ● प्रभो ! ज्ञानात्मा छो | जीवसूत्र |
| ● विदेहमां वसे बहु संतो | जीवसूत्र |
| ● जगतनां सर्व धर्मोमां | जीवसूत्र |
| ● के पश्चिम दिशेथी चडीयुं वादळुं रे ! | सम सूत्र |
| कहान मारग छे शूरानो | सूत्रत्रयी |
| ● लाग्यो दृष्टिनो रंग तने | सूत्रत्रयी |
| ● जैन धरममां अंधाधूंधी | मातमहिमा |
| सुवर्णसम आ तीरथमां कहानगुरु | मातमहिमा |
| गुरुवर जरूर पधारो ! | सूत्राष्टक |
| कही तो जुओ, कोई कही तो जुओ | सूत्राष्टक |
| ते देशमां विहरतां बहु शास्त्र जोयां | कहानमहिमा |
| कहानजी ! शुं रे कहुं हुं कहानजी | कहानमहिमा |
| अनंत काळथी आथड्यो रे ! | कहानमहिमा |
| जगतथी कंटाळी जईने दीक्षा... | कहानमहिमा |
| कहान मुखेथी जाय ळळी | कहानमहिमा |
| ● तुज प्रवचनो बहु प्रिय मने | कहानमहिमा |
| कहान कहुं ? सद्गुरु के कहुं | कहानमहिमा |
| गुरुदेव छो ज्ञानना दरिया... | कहानमहिमा |
| ● आज मंगळ दिन महा ऊगीयो रे | कहानमहिमा |
| सुवर्णपुरीना वासी गुरुने लाखो | कहानमहिमा |
| आवी'ती एक याद तारी गुरुजी | कहानमहिमा |
| कहानना नामनो आलाप में | कहानमहिमा |
| ● कहान आव्या ! अम तारणहार... | कहानमहिमा |
| गुरुना गुण पामर शुं कथे रे | कहानमहिमा |
| नव नव नवली बीजलडी | कहानामृत |
| शुं कहुं कहान हुं ? जगतथी थाकीयो | कहानमहिमा |
| ● प्रणमन करु गुरुदेवने (१३२) | कहानमहिमा |
| ● ज्ञानानंद सूर्य आज अहीं ऊगीयो | कहानमहिमा |

| मात महिमा | पुस्तिका |
|---|---|
| ● मात आव्यां ! | सूत्रत्रयी |
| ● बोलो ना केम अम संग ? माताजी ! | सूत्रत्रयी |
| धन्यावतार ! (गद्य/पद्य) | मातमहिमा |
| ● आवो, आवो, भगवती मात ! | मातमहिमा |
| आ लोक सौ जागी गया | मातमहिमा |
| जन्म वधाई (गद्य/पद्य) प्रभातने हजुं | मातमहिमा |
| लई विदेहनी वात तुं न्यारी | मातमहिमा |
| देवराज (गद्य/पद्य) अभिनय | मातमहिमा |
| छे कोण आ ! कहेशो तमे (गद्य/पद्य) | मातमहिमा |
| के मात मोरी अमथी नहीं मीठी... | मातमहिमा |
| आज मंगळ दिन महा ऊगीयो रे ! | मातमहिमा |
| उच्छवासे ने श्वासे मारी | मातमहिमा |
| अेनो अणमोल आतम रे ! | मातमहिमा |
| ● श्रावणी बीज रूडी आवी, आवी | मातमहिमा |
| मातानो जय हो ! | मातमहिमा |
| श्रावण वदी बीजलडी ने... | मातमहिमा |
| ● तमे रे ! जळ ने अमे माछली... | मातमहिमा |
| ना बोलो तो भले ना बोलो... | मातमहिमा |
| नव नव नवली बीजलडी ने... | मातमहिमा |
| ढोल साथे घंट वागे | मातमहिमा |
| जळहळता आतमाने घोळी | मातमहिमा |
| माता ! अद्भुत शक्ति तारी | मातमहिमा |
| ● समकित सुखडुं मळीयुं... | मातमहिमा |
| आ सौम्य सरळ ते बहेनश्री ने... | मातमहिमा |
| अहो ! अमर आतमा... | मातमहिमा |

# 'चैतन्य प्रिय' रचित प्रकाशित थयेल रचनाओ

| जैन भजनो (जनरल) | पुस्तिका |
|---|---|
| ● अररर ! हुं नाच्यो बहु गुरुराज | समकितसूत्र |
| ● जैनी जनतो तेने रे कहीए जे... | समकितसूत्र |
| ● आतम रटण केम छोडी दीधुं ? | समकितसूत्र |
| ● आवो रहेवासी रे आतमपुरना | समकितसूत्र |
| याद आवे छे गुरु साधना धाम रे ! | सूत्रत्रयी |
| ● अघरो कांई नथी मोक्षनो मारग | सूत्रत्रयी |
| ● गुंजे छे नाद ज्यां गुरुराजना रे ! | मातमहिमा |
| रे ! केटलाक एक इश्वरमां सदा... | मातमहिमा |
| अनंत ज्ञानीनो एक ज आशय... | सूत्राष्टक |
| आतम राम तमे जागो जागो हो... | सूत्राष्टक |
| समकित रतननी प्रीत-अरेरेरे ! | सूत्राष्टक |
| धारोके खूब खाधुं-पीधुं ने मोटर... | सूत्राष्टक |
| भवाई मानवीनी बधे भजवाई... | सूत्राष्टक |
| ● स्व स्वरूप सदा रमण करे... | सूत्राष्टक |
| अपूर्व अवसर ऐवो अमने... | सूत्राष्टक |
| मारा खेतरने रखवाळुं मारा आत्मनुं | सूत्राष्टक |
| अनादि काळनी अमारी... | सूत्राष्टक |
| क्षमानिधान निज शुद्ध ज्ञायक... | सूत्राष्टक |
| अमे कुटुंब कबीलाने पूछ्युं... | कहानमहिमा |
| आगमथी तुज अंतर दाजे... | कहानमहिमा |
| वीती वय नहीं पाछी वळे रे ! लोल | कहानमहिमा |
| ब्रह्मचर्य भावना | कहानमहिमा |
| नथी तुं आजकालनो | कहानमहिमा |
| धार्युं होत तो लाख बे लाख... | कहानमहिमा |
| छोडी दैने गृह सकळनां क्लेश... | कहानमहिमा |
| धर्मनी वकीलात | कहानमहिमा |
| ● हरि वसे छे तम अंतरमां | अप्रकाशित |
| ● शोभीतो धर्म (हां रे मने वालो) | मातमहिमा |
| शुद्ध बुद्ध कृतकृत्य जिनवर | मातमहिमा |
| त्राता, विधाता, शांत छो... | सूत्राष्टक |

| क्रम | सूत्र | श्लोक संख्या |
|---|---|---|
| १ | जीवसूत्र | ३१२ |
| २ | समकितसूत्र | ३७९ |
| ३ | पुण्य-पापसूत्र | ४०७ |
| ४ | कारकसूत्र | ६३३ |
| ५ | दृष्टिसूत्र | ३९५ |
| ६ | मार्गसूत्र | २५५ |
| ७ | उपादानसूत्र | २५१ |
| ८ | भावनासूत्र | १८० |
| ९ | नयसूत्र | ८६ |
| १० | ज्ञानसूत्र | ९६ |
| ११ | देवसूत्र | ४५७ |
| १२ | द्रव्यसूत्र | १०५ |
| १३ | पुरुषार्थसूत्र | १६० |
| १४ | पंचतत्त्वसूत्र | १९४ |
| १५ | कहान महिमा | (गीत) ३४ |
| १६ | मातमहिमा | (गीत) ३२ |

| क्रम | अन्य गीतो | सॉनेट |
|---|---|---|
| १ | मारां फैबा सरळ | मंदाक्रान्ता |
| २ | अमारा ए दादा | शिखरिणी |
| ३ | तमो तो रे ! चाल्यां ! | शिखरिणी |
| ४ | अमारा मातुश्री | शिखरिणी |
| ५ | अमारा बापुजी | शिखरिणी |
| ६ | स्मरीने गुण आपना | शार्दूलविक्रिडित |

| क्रम | नवा प्रकाशनो | | भाषा |
|---|---|---|---|
| १ | चंपामृत | ११९९ | गुजराती |
| २ | चंपामृत | ११९९ | हिन्दी |
| ३ | कहानामृत | १०७० | गुजराती |
| ४ | कहानामृत | १०७० | हिन्दी |

ऑडियो और VCD रूपांतर